श्रेष्ठ हिन्दी उपन्यास

खजुराहो की नगरवधू	शालिग्राम मिश्र
किन्नरी	,, ,,
काँटा और कली	पूर्णरामचन्द्रन 'उमाचन्द्रन'
युगपुरुष राम	अक्षयकुमार जैन
नेपालेश्वर	विराज
जुआरी	सत्यपाल विद्यालकार
*कलकत्ता के नजदीक ही	गजेन्द्रकुमार मित्र
अपराजिता	आचार्य चतुरसेन शास्त्री
गगामाता	पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'
शराबी	,, ,,
लोक-परलोक	उदयशकर भट्ट
सागर, लहरें और मनुष्य	,, ,,
तीन रास्ते	स्वदेशकुमार
मेरा जगल मेरी बस्ती	कृशनचन्दर
मृगजल	अनन्तगोपाल शेवडे
समुद्र और लहरें	शिवनारायण श्रीवास्तव
निजी सचिव	सत्यप्रसाद पाण्डेय
सफर	,, ,,
धर्म के नाम पर	कन्हैयालाल ओझा
ग्रामलक्ष्मी	पीताम्बर पटेल
सत्तावन का सेनानी	वसन्त वरखेडकर
सौन्दर्य की रेखाएँ	आस्कर वाइल्ड
ज्योतिदान	पृथ्वीनाथ शर्मा

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-११०००६

काली लड़की

आत्माराम एण्ड संस
दिल्ली लखनऊ

मूल्य : २२.५०

संस्करण : १९८४
प्रकाशक आत्माराम एण्ड संस
कश्मीरी गेट, दिल्ली-११०००६.

शाखा :
१७, अशोक मार्ग, लखनऊ

मुद्रक : श्याम प्रिंटर्स, दिल्ली-११००३२

KALI LAPAKI : Rajani Panikar : Rs 22.50

सुदर्शन, बिलौरी
और मधु को
सस्नेह

भूमिका

'काली लड़की' एक सामाजिक कहानी है जिसमें मेरा प्रयास, नागरिक समाज के उन अंशों को चित्रित करने का रहा है जिनमें काली लड़की रानी का जन्म होता है, पालन-पोषण होता है, वह बाल, युवा, वय संधि में पदार्पण करती है। उसके स्वप्न अँगड़ाई लेते हैं। अपने प्रति उपेक्षा और घृणा के वातावरण में वह अपनी बहन कावेरी के साथ ही बड़ी होती है, घर भर में पिता को छोड़कर और सब लोग उसके अस्तित्व के प्रति उदासीन हैं।

उसे घर में अचानक आ पड़ने वाला भार मानते हैं। किशोरावस्था से ही उसमें कुंठाएँ घर बनाती हैं। अन्ततः उसका सम्पूर्ण अस्तित्व उस सबके विरुद्ध भड़क उठता है। वह भविष्य को अपने अनुरूप ढालने को कृत संकल्प होती है और उसमें सफल होती है।

जब यह उपन्यास धारावाहिक रूप में 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित हुआ था, तो मुझे सहृदय पाठकों द्वारा बड़ा प्रोत्साहन मिला। प्रत्येक सप्ताह बहुत से पत्र आते, जो पाठकों की सहृदयता का परिचय देते। जहाँ कथानक, शैली तथा भाषा की पाठकगण प्रशंसा करते, वहाँ एक प्रश्न भी पूछ लेते, 'रानी की माँ का जैसा व्यवहार उससे है, क्या वैसा व्यवहार वास्तव में एक माँ अपनी सगी बेटी से कर सकती है?' मुझे आज्ञा दें तो मैं भी यही प्रश्न आप से पूछूंगी कि एक माँ ऐसा व्यवहार एक बेटी से कर सकती है? मुझे शत-प्रतिशत आशा है कि आपका उत्तर होगा, 'एक माँ ऐसा व्यवहार ही नहीं बल्कि इससे बुरा भी कर सकती है।' मुझे आधी दर्जन से अधिक 'काली' बहनों के पत्र आये, जिनमें अधिकतर उन कठोर यातनाओं का वर्णन किया गया था जो उन्हें काली होने के कारण अपनी माताओं से मिली। मानव सदा से आकर्षण और सौन्दर्य के प्रति झुकता है, सरल हो उठता है, कुरूप और कुटिलता

के प्रति वितृष्णा से भर उठता है ''ये संस्कार मानसिक और सामाजिक दोनों रूपों में हैं।

माँ अपनी काली बेटी को अच्छा भोजन भी खाने को नहीं देती क्योंकि उसे भय रहता है कि लड़की बड़ी दिखलाई देगी, तो उसका विवाह जल्द करना पड़ेगा। काली लड़की के लिए योग्य वर मिलना मुश्किल होगा। उस अनिवार्य कठिनाई को कुछ वर्षों तक टाल जाने के लिए माँ बेटी को पेट भर खाना नहीं देती। दूध से मुख धुलाती है लेकिन पीने को नहीं देती। उपन्यास में काली लडकी मैंने 'त्रस्त' सन्तान का प्रतीक लिया है। सन्तान, विशेषकर लड़की, यदि कोई अभाव लेकर जन्म लेती है, तो माता-पिता की सहानुभूति खो बैठती है। उसके स्वाभाविक गुण भी नज़र-अन्दाज़ कर दिए जाते हैं और उसके भीतर की नारी दबी हुई, घुटी हुई रह जाती है। वह अनायास ही परिवार के अन्य सदस्यों से दबती रहती है। काश !. अविभावक और माता-पिता उनकी यातना का अनुमान लगा पायें इससे अधिक क्या कहूँ, आप स्वयं निर्णय कर लीजिए।

—रजनी पनिकर

काली लड़की

मैं अपनी आँखों के आँसू सुखा चुकी हूँ। सच तो यह है कि आँखों से अविरल जलधार जीवन में दो या तीन बार से अधिक मैंने कभी बहाई ही नहीं। जब कभी ऐसी परिस्थिति आती, आँसू बहाने की इच्छा होती तो मैं अपने आँसुओं को चुपके-चुपके अन्तस् में ही टपका लेती। मन पर पड़ते खून के आँसू ! उनमें घायल आत्मा का लाल रक्त रहता। काली त्वचा होने पर भी रक्त लाल ही रहता है।

कहानी कहकर आपकी सहानुभूति नहीं उभारना चाहती। दया, करुणा तथा सहानुभूति से मुझे चिढ़ है। ससार में कुछ विरोधी सम्बन्धों को छोड़ कर कोई किसी से सहानुभूति कर सकता है क्या ? मुझे तो ढोंग ही लगता है। मैं अपनी सफाई भी नहीं देना चाहती। त्वचा उज्ज्वल न होने पर भी कृत्य उज्ज्वल हो सकते है, यह जानने की किसे फुरसत है !

मैं जन्म से ही काली हूँ। माँ गोरी, पिता का गेहुँआ रंग, बहन गोरी और मैं काली। मेरी बहन मुझसे छः वर्ष बड़ी है। वह मेरे साथ खेलती भी नहीं थी। पहली आवाज़ जो मेरे कानों में पड़ी वह थी कि मैं काली हूँ। सब मुझे 'काली' 'काली' कहकर पुकारते। हमारे

घर में एक नौकरानी थी, जिसे मेरे जन्म से पूर्व रखा गया था। मेरी माँ को पूर्ण आशा थी कि लड़का होगा। लड़के के पालन-पोषण में हाथ बटाने के लिए उन्होंने यह नौकरानी रखी थी। लड़के की आशा में केवल एक लड़की पाकर, वह भी काली, उन पर गाज गिरी होगी इसमें किसी को सन्देह नहीं होना चाहिये।

मुझे बचपन की सब बातें तो याद नहीं और न मैं उस कटु जीवन को अधिक याद करना ही चाहती हूँ। कुछ धुंधली-सी स्मृतियाँ-भर हैं। एक बात जो बचपन से ही नासूर की तरह मुझे गलाती रही, वह है"'मैं काली हूँ। आप कहेंगे कि भारत जैसे देश में आधी जन-संख्या काली है। यह तो तर्क की उक्ति है। एक मध्य-वर्गीय परिवार में जिसमे सब गोरे हों, एक लड़की का काला होना मानो उसके भाग्यहीन होने का सबसे बड़ा चिन्ह है, अन्धेरे भविष्य का प्रतीक है। मेरी माँ शायद मेरा रंग देखकर जड़ हो गई होंगी। उन्होंने उस दुर्भाग्य की छाया को दूर करने के लिए मेरा नाम रानी रख दिया। जब मैं राजा-रानियों की कहानियाँ सुनने-समझने के योग्य हुई तो मुझे यह बात बार-बार चुभती, क्या कभी काली रानी भी होती है? रानी को तो परियों की तरह सुन्दर होना चाहिये। मेरा नाम रानी क्यों रखा गया? बड़ी हुई तो स्कूल में प्रवेश कराया गया।

कक्षा में एक नटखट लड़का बोल ही तो पड़ा, 'तुम्हारा नाम रानी नहीं कोयल होना चाहिए था।' मेरे नन्हे-से कोमल हृदय पर यह चोट किसी चाबुक की मार से कम न लगी। मैं खिलखिला कर हँस पड़ी। मेरा बाल-हृदय जैसे एकाएक प्रौढ़ हो गया। स्कूल में वह पहला दिन था, मुझे अपनी माँ के प्रति विरक्ति हो आई। उस समय तो ऐसा लगा था, जैसे माँ पर केवल क्रोध आया था, पर वह घृणा थी। मेरे हृदय ने गवाही दे दी कि मेरी गोरी माँ ने मुझसे उपहास किया है।

अपनी नौकरानी"'चाँदी पर भी क्रोध आया। चाँदी प्रायः मुझे गोद में लेती तो मेरे साधारण सीधे काले केशों को सहलाती जाती और साथ ही माथा चूम कर कहती, 'रानो बिटिया, किसी दिन राजा की रानी बनेगी। इन भावभरी बड़ी-बड़ी आँखों में कौन अपना भाग्य नहीं खोजना चाहेगा ?'

उस समय यह बात समझ मे नही आती थी। जरा बड़ी हुई, अपनी काली मूरत आईने में देखने की लालसा बढ़ी तो मैंने जाना कि सच-मुच मेरे चेहरे का नक्शा बुरा नहीं। दीदी हमेशा गाढ़े रंग की साड़ियाँ पहनती, माँ भी लगभग वैसा ही पहनती। मुझे हीन समझ कर दीदी और माँ की उतरन दे दी जाती, जिन्हें कभी-कभी तो मै चाँदी को दे देती लेकिन जब विवश होकर मुझे पहनना पड़ता, तो मेरा काला रंग घना काला हो उठता।

स्कूल में कुछ लड़कियाँ मुझसे दबती थीं। वे सुन्दर मुख और शरीर पा कर भी, घर से गणित के प्रश्न हल करके न ला सकतीं थीं। उन्हे भूगोल भूलभुलैया लगता और विज्ञान के घंटे में अक्सर उनका समय स्कूल के नल के पास या 'कॉमन रूम' में कटता। ऐसी लड़कियों को सदैव सहायता की आवश्यकता रहती जो मैं तुरन्त देती, इसलिए कि वे लड़कियाँ मुझे अपने पास बैठने देती, मुझे काँच की चूड़ियाँ तथा रिबन उपहार में देतीं। दीदी हमेशा कहती, "जाने तुम्हारी सहेलियाँ इतनी सुन्दर कैसे हैं !" इन्ही लड़कियों में एक लड़की सुन्दरी शर्मा का मेरे जीवन के साथ बड़ा महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध रहा।

मेरी आयु उस समय चौदह और पन्द्रह के बीच होगी, अक्सर दीदी के व्याह की वात चलती। वह बी० ए० में दो बार फेल हो चुकी थी। पढ़ने में उनका मन नही लगता था। वह आईने के सामने खड़ी होकर शृंगार करती, माँ के साथ, मोहल्ले की स्त्रियों के साथ

गप्प मारती। चाँदी, माँ और जो भी स्त्री घर पर आई हो उनके साथ बैठकर ताश खेलती। मुझे इन ताश खेलने की गोष्ठियों में कभी किसी ने नही बुलाया। घर में कोई चाय-पार्टी हो, त्यौहारों पर सगे-सम्बन्धी जमा हों तो दीदी और माँ मेरी ओर केवल उस समय ध्यान देतीं, जब देखतीं कि काम-काज में हाथ बटाने के लिए किसी की आवश्यकता है। अक्सर ऐसा होता कि मेरे हिस्से का काम भी चाँदी ही निबटा देती। उसके साँवले हाथ, जिन पर ओ३म् और राम गुदा हुआ था, फुर्ती से काम करते। पन्द्रह तोले के कड़े घुमा-घुमा कर पान से रचे होठों और पीले मटमैले दाँतों से मुस्करा कर काम निबटा देती और मुझे पढने के लिए भेज देती।

उस समय भी मुझे पता था कि कमरे में मुझे वापस क्यों भेजा जा रहा है। सब जानते थे कि मैं पढने में तेज थी। फिर यों बार-बार पढ़-कर, इतना अधिक पढ़कर क्या होगा। मैं दस दिन भी ध्यान दूंगी तो श्रेणी में मेरा प्रथम स्थान तो कही गया ही नहीं। माँ को केवल यह चिन्ता है कि कही कोई सम्बन्धी यह न कह दे 'अरी गौरी, इस अपनी काली लड़की को कहाँ ब्याहेगी? इसे तो कोई भी न लेगा। हे राम! माता-पिता गोरे, बहन गोरी, और यह काली!'

कोई दूसरी फौरन बोल उठती—

'गौरी जीजी, तुमने सूर्य या चन्द्र-ग्रहण लगते वक्त परहेज नहीं किया होगा नही तो लड़की इतनी काली कैसे होती!'

ऐसी बातचीत के समय मैंने कई बार छिप कर अपनी माँ के मुख की भाव-भंगिमा देखी है। मेरी माँ मेरे सामने तो केवल एक दीर्घ नि:श्वास छोड़ इतना ही कहती, 'जहाँ इसका भाग्य इसे ले जाएगा वही ब्याही जायगी। लड़कियाँ भी कहीं किसी की कुंआरी रही हैं!' किन्तु जब मैं ओट में होती, तो मेरी माँ, अपने माथे पर हाथ मार कर कहती, 'इसका भाग्य ही खोटा है, इसने पिछले जन्म

में खोटे कर्म किए थे, उनका फल इस जन्म में भोगना ही होगा। हम लोग साधारण स्थिति के आदमी, ऐसी काली लड़की का अगर ब्याह करना होगा तो हमें दस हजार का दहेज देना पड़ेगा। नहीं जानती यह दस हजार कहाँ से आयेगा। बहन, जब से यह पैदा हुई है, चिन्ता के मारे मेरा तो भोजन भी आधा रह गया है। कद्दू की बेल से भी जल्दी यह लडकियाँ बढती हैं।' इतना कहने पर माँ एक बार और माथा पीट लेती। यदि पिताजी वहाँ उपस्थित होते तो वह फौरन कह देते, 'लड़की पढने में इतनी तेज़ है, क्या हुआ यदि जरा साँवली है। हिन्दुस्तान में बहुत-से आदमी इससे भी काले हैं।'

माँ का हृदय उतना विशाल नहीं था, वह फौरन उत्तर देती, 'किसी द्रविड़ से ही इसका विवाह होगा और कौन इसे ले जाएगा।' पिताजी माँ की बात का उत्तर न देकर सदा विषय बदल देते।

ऐसे छोटे-छोटे कटु वाक्य सुनना तो दिनचर्या के अंग थे। वास्तव में मेरा संघर्ष उस समय आरम्भ हुआ जब मेरी बहन कावेरी का विवाह हुआ। दूध जैसी श्वेत चिकनी त्वचा वाली, सलीकेदार कपड़े पहनने वाली, बात करने से पहले ही स्वयं अपनी बात पर हँस देने वाली कावेरी को कमल देखने आए। उसकी अब तक यह आदत थी कि जिस चीज को वह देखती, वह उसी की हो जाती, मानो वह स्वयं मलिका हो और उसके आस-पास के सब लोग उसकी प्रजा। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में कुछ ऐसा ही भाव रहता। जाने-अनजाने उसको इस भावना के आगे लोग झुक भी जाते। जाने क्यों और कैसे, उसका रूप सब लोगों को मोहित कर देता।

हाँ, तो जिस दिन कमल बाबू दीदी को देखने आये मुझे बाहर आने की मनाही कर दी गई थी। माँ नहीं चाहती थी कि मेरी छाया भी कमल देख पाये। उन्हें डर था कि काली साली देख कर कहीं वह यह न समझे कि कावेरी उनकी बेटी नहीं, किसी की माँगे की लड़की

दिखला दी गई है। मैंने माँ के नियन्त्रण के होते हुए भी कमल की एक झलक पा ही ली। कुछ विशेषता नही लगी मुझे। गेहुँआ रग, मंझौला कद, केवल साधारण। माँ दीदी के लिये यह साधारण-सा वर क्यों ढूढ रही है ? उन्हे कमल किस लिये पसन्द है ? इसमें कौन-सी विशेषता है ? वह दीदी को पसन्द करके चले गये तो मैंने अवसर पाकर चाँदी से पूछा, 'चाँदी, माँ को यह साधारण-सा वर कैसे पसन्द आ गया ?'

चाँदी ने कहा, 'तुम अभी बच्ची हो, रानी ! कमल बाबू के पास रुपया है। वह कावेरी बिटिया को चाँदी में तोल सकते हैं, सोने से मढ़ सकते हैं।'

'इनके पास इतना रुपया कहाँ से आया ?'

'काले वाजार से, बिटिया !'

मेरा मुख लाल हो गया। मैट्रिक में पढ़ती थी, फिर भी मुझे, 'काले वाजार का' अर्थ नहीं मालूम था। मैं समझी चाँदी मुझ से व्यंग्य कर रही है। मेरा हृदय चीत्कार कर उठा, परन्तु और दिनों की भाँति ही वह भी मौन चीत्कार था। चाँदी के पास उस दिन इतनी फ़ुरसत कहाँ थी कि अपनी बात का प्रभाव मेरे मुख पर देख सकती। वह छोटा-सा उत्तर देकर अपने काम में लग गई।

वह रात मेरे लिये भयानक रात थी। बाहर आकाश पर चाँद निकला था, तारे भी चमक रहे थे। मार्च का महीना था, सर्दी अधिक थी, खिड़की खुली थी, मैं अपने पलंग पर बैठी स्वय को धिक्कारती रही। इतनी गई-बीती हूँ मै, कि मुझे मेरे होने वाले जीजा के सामने नही जाने दिया गया। आखिर वह क्या करते ? खा जाते ? दीदी को 'न' कैसे कर देते ? काली मैं हूँ, मेरी छाया भी दीदी पर नही पड़ सकती। वह काली कैसे हो जायेगी, मेरी उस दिन की व्यथा कौन समझ सकता है ? जिसने चोट न खाई हो, वह पीड़ा क्या जाने !

कमल जी, इसी नाम से उन्हें हमारे घर में पुकारा जाता रहा। उनके चले जाने के बाद, माँ और दीदी में बहुत देर तक बातचीत होती रही। दीदी और मैं एक कमरे में सोती थी। साढ़े ग्यारह बजे तक दीदी कमरे में नहीं आयी तो मैंने बत्ती बुझा दी। माँ-बेटी में सहेलियों का-सा व्यवहार है। माँ, दीदी से केवल चौदह वर्ष बड़ी हैं और मुझ से बीस-इक्कीस वर्ष। मैं उत्सुकता लिए दीदी की प्रतीक्षा कर रही थी, चाहे सुबह उठकर वह मुझे पहली बात यही सुनाती कि 'तुम्हारा काला मनहूस मुख मैं नहीं देखना चाहती।' यह कह कर वह अपने गोरे गोल-गोल हाथ देखने लगती। मैं इतनी काली नहीं हूँ कि नीग्रो लगूं, परन्तु घर के अन्य सदस्यों से तो निःसन्देह मेरा रंग काला था।

विवाह दीदी का हो रहा था, धड़कनें मेरी तेज हो रही थी। बारह बजे के लगभग दीदी जब आई तो मैंने छूटते ही पूछा, 'दीदी, तम्हें अपने होने वाले दूल्हा पसन्द है?'

दीदी जाने माँ से क्या-क्या बात करके आयी थी, तुरन्त बोली, 'इतनी गोरी होने पर तो मुझे यह पति मिला है, यदि तुम्हारी-सी काली होती तो क्या होता?'

मैं ढीठ हो चुकी थी, फिर पूछा, 'बताओ न दीदी, तुम्हें पसन्द हैं?'

'पसन्द क्यों नहीं रानी, तू तो झूठमूठ की रानी है, मैं सचमुच की रानी बन जाऊँगी। जानती है दिल्ली में उनका बहुत बड़ा व्यापार है, लाखों का लेन-देन है, चार मकान है, दो मोटरें हैं। अब विवाह के बाद मेरे लिए नई मोटर खरीद रहे हैं।'

मैंने डरते-डरते पूछा था, 'दीदी, ब्याह में दूल्हा की मोटरें ही देखी जाती है?'

'हाँ, और क्या! उसका सोना और रुपया भी देखने में कोई

हर्ज नहीं।'

मैं इस विवाह के विषय में सोचने लगी, जो रुपया-पैसा देखकर रचाया जा रहा था। दीदी के एक-एक वाक्य में माँ की युक्तियों की गन्ध आ रही थी। वैसे भी दीदी के और माँ के विचार एक-से थे। मैं दीदी की बातों में डूबती-उतराती रही। निकट के थाने में तीन का घण्टा बोला, बस इतना सुन सकी। उसके बाद शायद सो गयी थी।

२

दीदी का व्याह हो गया। जाते समय दीदी इतना रोई कि पिता जी की आँखें भी भर आईं। पिता जी को मैंने जीवन में केवल दो बार ही रोते देखा है—एक तो दीदी की विदाई के दिन और दूसरी बार, फिर बताऊँगी।

मुझे माँ इस योग्य ही नहीं समझती थी कि मुझ से कुछ पूछें, दीदी का कपड़ा या गहना बनवाते समय मेरी राय की उन्हें कोई अपेक्षा न थी। जिसकी त्वचा काली हो भला वह क्या जाने कि कौन-सी साड़ी के साथ कौन-सा ब्लाऊज फबेगा। माँ खुले हाथों खर्च कर रही थीं। बुआ ने टोका, 'रानी का व्याह भी तो होगा, उस पर खर्च नहीं करोगी, जो इसी शादी पर सारा धन लुटा रही हो?'

माँ ने उदास होकर उत्तर दिया था, 'नहीं जानती, भगवान को क्या मन्जूर है। रानी का विवाह होगा तो किसके साथ? कौन इसे अपनायेगा?'

'वाह! भाभी वाह! रानी कुँआरी ही रहेगी। हमारी सत्या

(बुआ की ननद) रानी से भी साँवली है। फिर रानी के नक्श तो बहुत अच्छे हैं, आँखें भी सुन्दर हैं।'

उसके बाद माँ ने जो कहा, उसने मेरी आत्मा को झकझोर दिया। क्या कोई भी माँ अपने बच्चे के लिए वैसा कह सकती है? जब मैंने जन्म लिया था तो क्या माँ को प्रसव-पीडा कम हुई थी? मैंने सुना था कि माँ को सभी बच्चे प्यारे होते हैं, बच्चों में भेद केवल पिता बरतते है। विश्वास कीजिए—यह व्यवहार मेरी अपनी माँ ने मेरे साथ किया।

माँ ने कहा, 'सच पूछो जीजी, मैंने रानी को जी भर कर कभी देखा भी नही है। जब भी मैंने उसे देखा, सरसरी नज़र से ही देखा। मुझे उसे बहुत अच्छी तरह देखते डर लगता है। अभागिन इतनी काली है—मैं सोचती हूँ किसी देवी का श्राप है, जो ऐसी लड़की मेरी कोख से पैदा हुई।'

बुआ की आँखों में पानी छलछला आया, 'दुःखी मत हो भाभी, लड़की पढने में बड़ी तेज है, जरूर कुछ-न-कुछ बन जाएगी। तुम इसे लेडी डाक्टर बनाओ, डाक्टरी पढ़ने का उत्साह दो।'

इस पर माँ ने कहा, 'नही जीजी, एक तो हमारी हैसियत नही कि इसे डाक्टरी पढने के लिए भेजें, दूसरे यह कि डाक्टर बन कर यह जिन बच्चों को पैदा करवायेगी, वे भी इसके काले हाथों से काले ही होंगे।'

इसके बाद बुआ ने क्या उत्तर दिया, मैं सुनने के लिए नहीं रुकी, छत पर चली गई। मेरे भीतर कुछ टूट गया था। मेरी माँ मेरी बुआ से बात कर रही थी। क्या अपनी जननी भी ऐसी बात कर सकती है? माँ का प्यार मैंने नहीं पाया था, परन्तु मैं देखती थी कि माँ का प्यार होता कैसा है, किया कैसे जाता है। मेरी माँ दीदी को तो प्यार

करती थीं, मैने कई बार उन्हें दीदी के मुख की ओर वात्सल्य भरी नज़र से देखते हुए देखा है। दीदी के रूठने और मचलने पर वह क्या नहीं करती रहीं। एक बार शहर में एक प्रदर्शनी हो रही थी। दीदी ने उसमें साठ रुपये की एक साड़ी देखी, तो उनका मन मचल उठा। साठ रुपये की साड़ी। माँ के पास इतने रुपये नहीं थे कि उस साड़ी को वहीं दिलवा देतीं ? पिता जी छोटे-से बैंक के मैनेजर थे, केवल चार-सौ रुपया पाते थे। जिनमें घर का खर्च, हम लोगों की पढ़ाई-लिखाई, रिश्तेदारों के शादी-ब्याह, सभी कुछ तो करना पड़ता था। साठ रुपये की साड़ी माँ दीदी को कैसे ले देतीं ? घर आकर दीदी ने खाना नहीं खाया। सहानुभूति जतलाने के लिए नहीं, सचमुच ही प्रेमवश होकर माँ से भी खाना नहीं खाया गया। बहुत रोना-धोना हुआ, फिर रात को दीदी माँ के साथ सोईं और दूसरे दिन साड़ी खरीद ली गई थी।

वही माँ मेरे लिए, अपनी सन्तान के लिए, ऐसे शब्द प्रयोग कर रही है। मैं तिलमिला उठी थी। जी चाहता था कि नीचे हलवाई ने जो बड़ी-सी कढ़ाई घी की मिठाई तलने के लिए गर्म की है, उसमें कूद पड़ूँ, छलाँग लगा दूँ। वह जलन शायद इस जलन से कम होगी जो मेरे हृदय को बुरी तरह तड़पा रही है।

मैं वैसा नहीं कर सकी। भाग्य में बदा मुझे अभी देखना बाकी था। जब-जब मैं माँ के प्यार के अभाव में दुःखी होती, तो मुझे पिता जी की याद आ जाती। कितने उदार हैं ! दीदी के लिए घड़ी लाये तो मेरे लिये भी। माँ ने पूछा था, 'कावेरी का तो विवाह है, रानी पर फिज़ूल-खर्च करने की क्या आवश्यकता थी ?'

पिता जी शान्त चित्त से बोले थे, 'रानी प्रथम श्रेणी में मैट्रिक पास हुई है। उसे कॉलेज जाना होगा। कॉलेज में घड़ी की आवश्यकता तो पड़ेगी।'

माँ चुप रहीं। इस बात का उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। मुझे

पिता जी से उपहार पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। बचपन से ही बड़ी उपेक्षा पाने के कारण मेरा हृदय अत्यधिक कोमल एवं संवेदनशील हो गया था। चाँदी के कहने पर माँ ने मुझे हल्के रंग की दो रेशमी साड़ियाँ बनवा दी, जिन्हें मे विवाह के अवसर पर पहनूं। मैंने उन्हें विवाह के अवसर पर नहीं पहना था। उस भीड़-भाड़ में किस को चिन्ता थी कि कोई मेरे कपड़े देखता। किसे गरज थी, जो देखता कि मैंने क्या पहना है और क्या नहीं ?

जब दीदी एक बार ससुराल रह-कर घर लौटी तो कमल बाबू को दिखलाने के लिए कि वह यह न समझें कि मेरे पास अच्छे कपड़े नहीं, मैंने वे साड़ियाँ पहनीं थीं। उस घटना की याद कर आज भी टीस होती है।

कमल बाबू का हमारे घर में किसी राजा-महाराजा से कम सम्मान नही हो रहा था। सब की देखा-देखी मेरी भी बड़ी इच्छा थी कि मेरे एक मात्र जीजा मुझ से हास-परिहास करें। विवाह के दिन जब मेरा परिचय उनसे कराया गया, तो उन्होंने एक बार मुझे देखा और फिर मेरे साथ खड़ी मेरी सहेली सुन्दरी शर्मा को नमस्कार किया। सुन्दरी का जैसा नाम था, वैसा ही रूप। वह अपने सौन्दर्य का मूल्य भी जानती थी। उसने कमल बाबू की मुस्कान का उत्तर आँखों में स्वागत भर कर दिया। कमल बाबू जब दीदी को पहुँचाने आए तो उनकी आँखे सुन्दरी को खोज रही थी। दीदी से, माँ से या मुझसे उन्होंने नहीं पूछा। कैसे पूछा, यह मै नही जानती। मैंने विस्तार में यह पूछा भी नही कि उन्होने क्या कहा। केवल इतना जानती हूँ कि चाँदी ने अपने हाथों के मोटे-मोटे कड़ों को एक दूसरे से टकरा कर कहा, 'रानी बिटिया, जानती हो जमाई बाबू सुन्दरी बीबी को पूछ रहे थे।'

'तुमने कहा क्यों नही कि सुन्दरी तो दिल्ली पढ़ने चली गई ?'

चाँदी ने हँस कर कहा, 'वाह बिटिया, तुम ही क्यों नहीं उनसे मिलने चली जाती ?'

मुझे दीदी के विवाह की वह रात याद हो आई जब मेरा परिचय कराया गया था। उन्होंने फटी-फटी आँखों से मेरी ओर देखा था और फिर सुन्दरी को देखने लगे थे। मैं अपने अन्तर्मुखी स्वभाव के कारण यों ही किसी के सामने जाने पर झिझकती थी, फिर कमल बाबू के सामने जाना और भी मुश्किल था।

ससुराल में सप्ताह भर रहने से जाने कैसे दीदी का प्यार मुझ पर उमड़ पड़ा था जैसे स्नेह भरा घड़ा कहीं छिपा कर रक्खा गया था, जो फूट पड़ा था और स्नेह से सराबोर किये जा रहा था। दीदी जब मुझे देखती, लिपट जाती—'रानी, मैं तेरी बहुत याद करती थी। तेरा चुप रहना, कभी-कभी कोई तीखी बात कह देना और फिर आँखों में आँसू भर लेना, सब मुझे याद आता।'

दीदी मुझसे कई घण्टे तक बात करती रहीं। अपनी ससुराल की बातें कि उनकी सास कमल बाबू के बड़े भाई के साथ रहती हैं, क्योंकि कमल बाबू की आदतें उन्हें पसन्द नहीं हैं। वह पुराने विचारों की हैं, उन्हें क्लबों में घूमना अच्छा नहीं लगता, बेटे का शराब पीना भी वह पसन्द नहीं करती। कमल बाबू शराब पीते हैं, यह तो हम लोगों को दीदी के विवाह से पहले ही पता चल गया था। माँ ने यह कहकर टाल दिया था कि सभी बड़े आदमी पीते हैं, कमल बाबू ने पी ली तो क्या हो गया? दीदी ने यह भी बतलाया कि कमल बाबू को शिकार का भी शौक है और वह बहुत अच्छे शिकारी हैं। उनके घर में जगह-जगह शेर की खाल और हिरन के सींग लगे हुए हैं।

दीदी का रंग तो पहले ही चमकता हुआ गोरा था, लगता था अब जैसे उसमें किसी ने चन्दन मिला दिया हो। वह बात कर रही थी तो ऐसे लगता था जैसे प्रसन्नता मूर्तिमान हो उठी हो। खुल कर हँसने की, बात बात पर कहकहा लगाने की तो दीदी की पुरानी आदत थी। अब तो उनकी आँखों में जैसे दीप झिलमिला रहे थे। होठों पर मुस्कान ने बसेरा कर लिया था। दीदी के घुंघराले बालों में भी ऐसे

लगता, मानो सितारे टंके हों। मैं अपनी बहन के सौन्दर्य से स्वयं अभिभूत थी।

हमारे छोटे-से घर में मानों कमल बाबू और दीदी के आने पर तूफान आ गया था। घर की ऊपरी मंजिल में केवल दो कमरे थे और नीचे तीन। ऊपर के दो कमरों में, एक में मै और दीदी रहते थे, दूसरे में कुछ सामान पड़ा रहता था। और बरसात में, माँ और पिता जी सोते थे। नीचे वाले कमरों में एक गोल कमरा था, दूसरे में माँ और पिता जी, तीसरे में कोई मेहमान आता तो वह रहता। मेहमान वाले कमरे में सामान आदि भी पड़ा रहता। विवाह के बाद दीदी कमल बाबू के साथ आईं तो माँ ने उनके रहने का प्रवन्ध मेरे कमरे में किया। मुझे अपने कमरे के साथ लगी बरसाती में पहुँचा दिया गया। ऊपर नीचे जाते कमल बाबू से सामना हो जाता। वह मुझे देखते और नीचे उतर जाते या मुझे देखते तो मुँह फेर लेते। मन-ही मन मुझे उन पर क्रोध आता। सभ्यता के नाते ही कुछ बोलें, यों मुँह फेर लेने से क्या होगा। शायद सोचते हैं मुझे नीचा दिखला रहे हैं, हीन जतला रहे हैं। जाने अपने को क्या समझते है!

जो चुहल, कमल बाबू की दीदी की सहेलियों से होनी चाहिये थी, वह माँ से होती। हमारी माँ देखने में बहुत अच्छी थी। गोरा रंग, इकहरा शरीर, चुस्त गठन, लम्बे बाल, जिनका प्रदर्शन वह पैंतीस वर्ष की आयु में करना भी न भूलती थीं। माँ ने पिता जी के साथ रह कर अंग्रेजी भी सीख ली थी। वह हमारी तरह सुविधा से अंग्रेज़ी में बातचीत कर लेती थी। माँ के लिए मुझे ऐसा कहना तो नही चाहिये, परन्तु उस समय ऐसा लगता था मानो उन्हें अपनी जवानी फिर से याद आ रही थी। कमल बाबू उनके जमाई थे, परन्तु जितने खुले रूप में वह उनसे मिलती थी, शायद पिता जी को छोड़ कर किसी दूसरे पुरुष से नही मिली होंगी। दीदी, माँ, कमल बाबू और कभी-कभी साथ में चाँदी घंटों ताश खेलते। दीदी की बड़ी इच्छा थी कि

मैं भी ताश खेलूं। किन्तु न मैं न कभी ताश खेली थी, न उसमें मेरी रुचि ही थी।

माँ जिस तरह कमल बाबू की आरती उतारतीं, वह भी मुझे बहुत अखरता था। जमाई सबके होते हैं। सुन्दरी की भी दो बड़ी बहनों का विवाह हो चुका था। उसके जीजा भी लखनऊ आते थे। उसके छोटे जीजा तो बहुत ही नम्र और सभ्य हैं। कोई भी उनसे मिल कर प्रसन्न होता है। हर व्यक्ति से बहुत अच्छी तरह पेश आते हैं। उनकी माँ भी अपने जमाइयों की खातिर करती थी, परन्तु हमारी माँ की तरह नहीं।

कमल बाबू की बात दूसरी थी। वह घर के प्रथम जमाई तो थे ही, तिस पर घर में कोई लड़का न होने से वह पुत्र के अभाव की भी पूर्ति करते थे। माँ उनको देख कर बार-बार झूम-झूम उठती।

पिता जी ने बहुत चाहा कि मैं डाक्टरी पढ़ने के लिए विज्ञान लेकर पढ़ूँ परन्तु माँ नहीं मानी और मैंने अपनी ओर से भी जोर नहीं दिया, क्योंकि मुझे रह-रह कर माँ की यह बात याद आ जाती थी, 'यह डाक्टर बन कर भी क्या करेगी। जो बच्चे इसके हाथ से पैदा होंगे, वे सब काले निकलेंगे।' घृणा से मेरा मन भर आता था और शरीर तन जाता था। मैंने इतिहास, संगीत और हिन्दी लेकर इन्टर पास किया। बी० ए० में हिन्दी और संगीत तथा एम० ए० में केवल हिन्दी।

अपने शिक्षा-काल की खट्टी-मीठी बातें मुझे भी उतनी ही प्रिय है जितनी किसी को हो सकती है। माँ का बर्ताव कैसा रहा, एक दो वाक्यों में तो बाँध कर नहीं बतलाया जा सकता। माँ का सम्बन्ध तो बेटी से, विशेष कर जब वह दोनों ही घर में रह जाए, हर क्षण का होता है और जीवन की प्रत्येक महत्वपूर्ण घटना के साथ उसकी कोई-न-कोई याद लिपटी रहती है। ज्यों-ज्यों मैं अपने जीवन की

घटनाएँ कहती जाऊँगी, माँ स्वयं साथ आती जायेगी।

कमल बाबू ने मेरे कॉलेज में प्रवेश करने से पहले ही यह बतला दिया था कि उनकी मुझमें किसी प्रकार की दिलचस्पी नही रहेगी! कहने के लिए तो मैं भी कह दूँ कि मेरी दिलचस्पी भी उनमें घट गयी थी, तो झूठ होगा। एक इतना बड़ा झूठ बोल कर मैं आगे और अधिक झूठ कैसे बोलती जाऊँगी? फिर मेरी कमल बाबू में दिलचस्पी तो मेरी कहानी का एक मुख्य भाग है। मैं इस पर आवरण डाल दूँ तो शेष सब फीका रह जायगा।

३

उस दिन बी० ए० का परिणाम घोषित हुआ था। प्रथम श्रेणी में पास होना मेरे लिए नियम-सा था। इस बार भी मैं प्रथम श्रेणी में पास हुई थी और कॉलेज में प्रथम आई थी। घर पर बधाई देने वालों का ताँता लगा था। मेरी सहपाठिनों के अलावा कॉलेज के प्रमुख अध्यापक भी आये थे, जिनमें स्त्री और पुरुष दोनों ही थे। मै हल्की-सी मुस्कान लिए सब का स्वागत करती, फिर सिर नीचा कर लेती। बार-बार प्रथम रहने से इस अभिनय का अच्छा-खासा अभ्यास हो गया था। माँ भी आज के दिन मुझसे घृणा नहीं कर पाती। आने वालों से मेरी तारीफ करतीं। एक ही वाक्य उन्हें हर दो वर्ष के बाद दोहराना पड़ता था, 'रानी को भगवान ने बुद्धि देते समय कोई कसर नही छोड़ी।' माँ की बात में मेरे कालेपन का कहीं उल्लेख न होता, मैं कृतज्ञ हो उठती। फिर परीक्षा
ऐसे होते जिनमें मेरा मान होता,
उसे गोल कमरे में रख दिया जाता। चादा के प्याले गोल-कमरे म

सजा दिये जाते, दूसरों के सामने प्रत्येक वस्तु का इतिहास खोल कर सुनाया जाता मानो घर भर में केवल मैं ही थी।

बी० ए० का परिणाम विशेष महत्व रखता था, क्योंकि न तो मेरी मौसी न बुग्रा...सच पूछा जाये तो एक-दो लड़कों को छोड़कर और कोई भी हमारे परिवार में बी० ए० पास न था। पिता जी स्वयं बी० ए० पास थे, परन्तु उनको सैकिंड क्लास भी न मिला था। दीदी बी० ए० पास नहीं कर सकी थी। उन दिनों वह हमारे पास ही आई हुई थीं, क्योंकि बड़े मुन्ने ने जन्म लिया था। परिणाम वाले दिन वह पन्द्रह दिन का हो गया था। दीदी के चार वर्ष के विवाहित जीवन की यह पहली सन्तान थी। माँ का अपना कोई लड़का नहीं था, इसलिए मुन्ना का जन्म केवल कमल बाबू के लिए ही नहीं हमारी माँ के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण था। मुन्ना के जन्म के बाद से वह रुपया पानी की तरह लुटा रही थी। अभी दीदी के विवाह का ऋण पूरी तरह उतरा नहीं था कि माँ ने फिर हलवाई का, कपड़े वाले का और सुनार का ऋण चढ़ा लिया।

कावेरी को देने के लिए तो एक हार, एक जोड़ा कंगन बने, मुन्ना के हाथ के कड़े और सोने के बटन भी बनवाये गये। मुझे पिता जी का ध्यान आता तो बहुत बुरा लगता। वह बेचारे पहले ही जान तोड़कर मेहनत करते थे, तिस पर पाँच-छः तोला सोने का मूल्य जब उन्हें देना पड़ेगा तो बेचारे क्या करेंगे? कहाँ से रुपया लाएँगे?

माँ को बिरादरी में नाक ऊँची रखनी थी। कमल बाबू की माँ शायद बहुत बार कह चुकी थी कि कमल बाबू ने रूप के मोह में अपने से नीची हैसीयत वालों के घर विवाह किया। उन्हें कावेरी के फैशन फूटी आँखों न भाते। कावेरी ने माँ से केवल यह सीखा था कि घर में रुपया-पैसा हो या न हो, घर की स्त्री के पास बढ़िया-से-बढ़िया पहनने-ओढ़ने को होना चाहिए। माँ मध्यवर्गीय परिवार की पुत्री थी और विवाह भी उसी स्तर के परिवार में हुआ था। उन्हें यही शिक्षा

मिली थी कि पति भी प्रायः उस पत्नी से दबता रहता है, जो खर्चीली होती है। माँ का कहना था कि पति-समुदाय की यह बहुत बड़ी भूल होती है कि उनकी पत्नी खर्चीली हो, उनका खर्च करवाये। यदि वह खर्च नहीं करवाती तो वह उसका उतना आदर नहीं करते, जितना एक खर्चीली पत्नी का करते हैं। माँ का तो कहना था कि मौका मिलने पर पति दूसरों की पत्नियों के, नहीं तो किसी अन्य नारी के नाज उठाने लगते हैं।

कावेरी दीदी माँ की दी हुई शिक्षा पर भला क्यों न चलती। हर बार दो-चार महीने के बाद जब वह आती तो नई साड़ियाँ, नये आभूषण और नई-नई सैंडिल, चप्पल लेकर आती। पुरानी साड़ियाँ होती तो प्रायः मुझे दे डालतीं मेरी भी मौज हो गई थी। जब से दीदी का विवाह हुआ था, मेरे पास ढेरों कपड़े हो गये थे। इन पुरानी साड़ियों के अलावा वह मेरे लिए नयी साड़ियाँ भी लेकर आती, किताबें भी उपहार में लाती ही रहती। इन किताबों में अधिकतर उपन्यास ही होते···हिन्दी और अंग्रेजी के। दीदी की समझ में सिवाय उपन्यासों के और कोई किताब पढ़ने लायक नहीं हो सकती थी। ये उपन्यास भी प्रायः श्री अमर और श्री अनजान आदि के होते, जिनमें मसूरी में एक झील होने का वर्णन रहता और उल्टी-सीधी प्रेम-कहानियाँ होती। ऐसी प्रेम-कहानियाँ जिन्हें पढ़कर किसी भी बुद्धिजीवी को उबकाई हो आये। दीदी ये पुस्तकें लाती तो मैं 'न' कैसे करती, चुपचाप अपने पास रख लेती और कभी-कभी समय मिलने पर पढ़ती थी।

मैं अपने बी० ए० परीक्षा के परिणाम वाले दिन की बात कह रही थी। पिता जी, स्वाभाविक ही है, बहुत प्रसन्न थे। वह किसी तरह भी प्रसन्नता छिपा नहीं पा रहे थे। पिता जी उस दिन काम पर भी नहीं गये। माँ ने कहा, 'आज बैंक नहीं जाओगे ?'

'नहीं, रोज-रोज तो हमारी बेटी फर्स्ट डिवीजन में बी० ए०

नहीं पास करेगी। लोग आयेंगे, बधाई देंगे, तो कोई बातचीत करने वाला भी तो चाहिये।'

सम्बन्धी तो सफलताओं का समाचार सुनकर प्रसन्न नही होते, असफलता मिलने पर ज्यादा खुश होते हैं। दुनियां में मन से दूसरे की भलाई चाहने वाले अँगुलियों पर गिने जा सकते हैं।

मां ने कहा—'कमल बाबू जो हैं, वह बातचीत कर लेंगे। तुम काम पर जाना चाहो तो चले जाओ।'

मैंने उत्सुकता से कमल बाबू की ओर देखा। उन्होंने उपेक्षा से कहा, 'पिता जी ठीक कहते हैं। मैं किसी से भी नहीं बोल पाऊँगा। फिर परीक्षा में पास कोई हुआ है, फर्स्ट क्लास किसी की आई है, खुश कोई और हो रहा है—यह भी मेरी समझ में नही आया।'

कमल बाबू का रूखा उत्तर सुनकर मां तो मुस्करा दी मानो दामाद ने कोई बहुत बड़ी बात कह दी हो। कावेरी अवाक् होकर पति का मुख देखने लगी और ज़रा-सा हँस कर बोली, 'मैं नहीं जानती थी कि पढ़ाई-लिखाई तुम्हारे लिए इतना कम महत्त्व रखती है। क्या तुमने बधाई दी रानी को?'

कमल बाबू के मुख की ओर देखने का साहस तो मुझे नहीं हुआ परन्तु उनके स्वर से मैं समझ गई कि वह मुझ पर हँस रहे हैं।

'बधाई ऐसे ही तो नहीं दे दी जाती। उसके लिये कुछ मिठाई और कुछ दान-दक्षिणा की आवश्यकता रहती है।'

मां ने तुरन्त नौकर को बढ़िया मिठाई लाने के लिए भेज दिया। सुबह कुछ लड्डू तो आ गये थे, परन्तु जिन लड्डुओं को साधारण-जन खा रहे थे भला वे हमारे कमल बाबू के गले से नीचे कैसे उतरते!

कावेरी मेरी पढ़ाई की सफलता पर बहुत प्रसन्न थी। उसने पिता जी से कहा, 'पिता जी, एम० ए० तो रानी को दिल्ली से कराना

चाहिए।'

'नही बेटी, तुम दिल्ली चली जाती हो, तो घर सूना हो जाता है। रानी भी चली गयी तो यहाँ कौन रहेगा?'

'आप मुन्ना को रख लीजिए। कावेरी से उसका पालन-पोषण भी नहीं हो सकेगा', कमल बाबू ने छूटते ही कहा।

'बेटा, तुमने तो मेरे मुँह की बात छीन ली। मैं जानती हूँ कावेरी लाड़-चाव में पली है। बच्चे के शुरू के दो वर्ष बड़े मुश्किल होते हैं। यदि इन दो वर्षों में मुन्ना की भली प्रकार देखभाल नही हुई तो ठीक नहीं होगा। फिर हमारे भी तो कोई लड़का नहीं है मुन्ना हमारा बेटा ही तो है।' माँ ने कहा।

पिता जी का मुख बेटे के नाम से कोमल हो उठा। शायद वह मन में कहीं ऐसी इच्छा पाल रहे थे कि कावेरी के बेटा हो और वह उसे गोद लें।

मुझ से नही रहा गया। मैंने फौरन कहा, 'दीदी से तो, पूछ लो।'

माँ बोली थी, 'कहो न, कावेरी?'

मुझे बडा अचम्भा हुआ, जिस समय दीदी ने कमल बाबू की ओर देखते हुए कहा था, 'जो इनकी और आप सबकी इच्छा, वही मेरी इच्छा। मैं आपसे बाहर नहीं हूँ।'

'दीदी, तुम मुन्ना यहाँ छोड़ जाओगी?'

'हाँ, तुम मेरे साथ चलोगी, मुन्ना यहाँ माँ के पास रहेगा।'

मुझे दिल्ली जाना चाहिए या नही, माँ ने कोई राय नही दी। मुझे एकदम यह बात खटकी कि माँ शायद चाहती हैं कि मैं किसी तरह यहाँ से टल जाऊँ। एम० ए० करने के लिए यदि दीदी के पास जाऊँगी, तो दिल्ली में कहीं नौकरी भी खोज लूँगी—माँ की शायद यही इच्छा थी।

उस दिन मेरे परिणाम को भूल कर माँ और पिता जी मुन्ना को विधिवत् गोद लेने की बात सोचने लगे। मैंने एक बार मुन्ना की दादी की चर्चा की तो माँ तुरन्त बोली, 'मुन्ना पन्द्रह दिन का हो गया है। दादी को एक बार भी ख्याल नहीं आया कि यहाँ आकर पोते को देख जाये। रुपया-पैसा तो देना दूर रहा।"

कमल बाबू ने माँ की हाँ-में-हाँ मिलाई। मैंने कभी यह नही जाना था कि कोई पिता अपनी सन्तान को दूसरों को देने के लिए इतना उत्सुक होता होगा।

कमल बाबू को हमारी आर्थिक स्थिति का भी पता था, फिर उनके लिए विशेष लोभ की कौन-सी बात थी ?

पिता जी भी पुत्र पाने की खुशी में कचहरी से दस्तावेज आदि ले आये और मुन्ना गोद ले लिया गया। कमल बाबू ने लिखा-पढ़ी कर दी। दीदी ने भी दस्तखत किये और साथ ही पिता जी और माँ ने भी। उस शाम को हमारे घर में चार वर्ष के बाद अंग्रेजी बाजा बजवाया गया। चार वर्ष पहले दीदी के विवाह पर वैसा ही बाजा बजा था। माँ कभी भी उत्सव मनाने से न चूकती, विशेषकर यदि उत्सव का सम्बन्ध कावेरी दीदी से हो। कावेरी उनकी पहली सुन्दर और लाड़ली सन्तान है।

जाने क्यों उस रात मैं बहुत देर तक जागती रही थी। मुझे मुन्ना प्रिय था, अच्छा लगता था। परन्तु माँ के उसको गोद लेने से ऐसा लग रहा था मानो मेरा नाता इस घर से टूट रहा है। मुझे दिल्ली जाना होगा। कमल बाबू सीधे मुँह बात नही करते। साली इतनी काली है, यह वह किसी के भी सामने स्वीकार कैसे कर सकेंगे। दिल्ली में मेरा जीवन संघर्ष का जीवन होगा। माँ पहले ही मेरी ओर बहुत कम ध्यान देती थी। अब तो मुन्ना लेकर और व्यस्त हो जाएँगी। मेरी चिन्ता क्यों करेंगी ? मुन्ना के गोद ले लिए जाने से जैसे मैं बिलकुल अनाथ हो गई थी।

विवाह के बाद से मुझसे कावेरी का व्यवहार बदल गया था, परन्तु बचपन की बात याद करके आज भी मुझे रोना आता है। माँ ने दीदी की बात का एक बार भी प्रतिवाद नहीं किया। मैं ऊपर अपने कमरे में गयी, तो चाँदी समय निकाल मेरे पास आ बैठी।

'रानी बिटिया, तुम बी० ए० पास हो गई हो। अब तुम्हें काहे की चिन्ता, जब चाहो नौकरी कर सकती हो। ये मुन्ना को गोद लें चाहे किसी और को।'

'तुम जानती हो चाँदी,' माँ मुझे दिल्ली क्यों भेजना चाहती है?'

'बिटिया, मैंने तो सिर्फ इतना सुना है कि तुम्हें दिल्ली भेज रहे हैं। कावेरी बिटिया बहू जी से कह रही थी कि दिल्ली में तुम्हारे लिए कोई लड़का जरूर मिल जायेगा। वहाँ एम० ए० भी पढ़ लोगी और व्याह का प्रबन्ध भी अपने आप हो जाएगा।'

मुझे चाँदी की बात बहुत बुरी लगी। जी चाहा कि उठ कर मना कर दूँ कि मुझे दिल्ली नहीं जाना है, पर लेटी ही रही, कुछ कर नहीं सकी।

भाग्य में जो लिखा था, होना ही था। उसे कौन रोक सकता था। न मैं, न माँ। उन्नीस वर्ष की आयु हो चली थी। अब तक जीवन-समतल एक धीमी गति से चल रहा था, जिसमें कभी-कभी छोटे-छोटे तूफान आ जाते, जिनका प्रायः मेरी निजी भावनाओं से ही सम्बन्ध होता। उन छोटे-छोटे ववंडरों से मैं इतनी परेशान रहती थी।

एकाएक मुझे विचार आया कि मेरी सखी सुन्दरी शर्मा दिल्ली में है। वह भी अपनी बड़ी बहन के पास रह कर पढ़ रही थी। सुन्दरी शर्मा वास्तव में सुन्दरी है, यह मैं कह चुकी हूँ। अपनी सखी का वहाँ होना सोच कर मुझे वैसे ही ढाँढस बँधा जैसे सूखे खेतों के मालिक किसान को मेघाच्छादित आकाश देख कर होता है।

देर रात गये तक मैं सोचती रही। जब हम अपने जीवन की सीधी लीक बदलने को होते हैं तो हमारा हृदय और दिनों से अधिक सवेदनशील हो उठता है। हम सोचने लगते हैं कि जाने भविष्य कैसा होगा। हमारा वर्तमान चाहे जैसा भी हो, भविष्य को सदैव आशंका की दृष्टि से देखते हैं और दुःखमय 'भूत' के प्रति भी उस समय मोह जाग उठता है।

मुझे अपने विषय में कुछ निराशाजनक सोचने की आदत हो गई थी। सदैव ही मुझे ऐसा लगता जैसे सिवाय पढ़ाई-लिखाई के मेरे जीवन में अन्य कुछ आशाजनक और अच्छा नहीं घट सकता। एकाएक मुझे विचार आया—क्यों न दीदी से कहूँ और चाँदी को साथ ले चलूँ। मुन्ना के लिए माँ कोई पढ़ी-लिखी आया रख लेंगी।

दूसरे दिन विचार-विमर्श के बाद तय हुआ कि कम-से-कम दो मास दीदी लखनऊ ही रहेंगी और मुन्ना को दूध पिलायेंगी। यह निश्चय माँ और दीदी ने कमल बाबू की राय के विरुद्ध किया।

दीदी में पुत्र की माँ बनने पर भी इतना साहस न था कि वह कमल बाबू की बात का जोरदार प्रतिवाद कर सकती।

४

मैं दिल्ली एम० ए० करने आई तो कावेरी और कमल बाबू में परस्पर तनाव बहुत बढ़ चुका था। एक बार एक उपन्यास में मैंने पढ़ा था कि जब पुरुष नारी पर आधिपत्य जमा लेता है, जब वह बिल्कुल ग्की हो जाती है, तो पुरुष को प्रायः एक विचित्र अनुभव होता है। पुरुष को जैसे एक भावनात्मक शीशे की उपलब्धि हो जाती है, जिसमें

वह अपने भाव-अनुभावों की प्रतिछाया देख सकता है। नारी प्रतिध्वनि करने वाला जैसे एक यन्त्र हो—जिसमें जितनी आवाज पुरुष खर्च करे, जितना ऊँचा उसका स्वर हो, उतनी ही तीव्र प्रतिध्वनि नारी की ओर से होती है।

विवाह के प्रारम्भ में पुरुष जब नारी को देवी कहकर पुकारता है, तो नारी भी देवता का ही सम्बोधन देती है। दोनों एक दूसरे की पूजा करते हैं। जब यह स्थिति समाप्त हो जाती है तो पुरुष यह अनुभव करता है कि नारी केवल उसकी सहकारी मात्र रह गई है। फिर एक स्थिति ऐसी आती है, जब पुरुष यह सोचने लगता है कि नारी ने उसकी सबसे बड़ी चीज छीन ली, उसकी स्वतंत्रता छीन ली, और वह नारी के अधीन हो गया है। ऐसी स्थिति में वह दो बातें ही करता है—या तो पत्नी को धोखा देता है, या बात-बात पर झुंझला पड़ता है।

कमल कावेरी के साथ बातें करते। मुझसे तो वह बात ही नहीं करते थे। मैं न उनसे कुछ कह सकती थी, न कावेरी के सामने मुख ही खोल सकती थी।

कभी-कभी मुझे लगता कि दोष मेरा ही है। मेरे वहाँ पहुँचते ही सुन्दरी शर्मा घर पर आने-जाने लगी थी। आरम्भ में तो दिखावा करने के लिए कमल बाबू उसकी परवाह न करते। सुन्दरी ने दिल्ली में आकर अपना रहन-सहन बिल्कुल बदल दिया था। उसके घने लम्बे केश अब लड़कों की तरह ऊँचे-ऊँचे कटे थे। किसी दिन साड़ी में होती तो किसी दिन स्कर्ट में और कई बार तो ऊँची-ऊँची पतलून पहन कर भी वह घर आती। उसकी पतलून टखनों से ऊपर होती, उसके साथ वह छोटा-सा ब्लाऊज पहनती और लिपस्टिक से रंगे होंठ उसे कार्टून बना देते।

सुन्दरी की आँखें गिद्ध की आँखों की तरह अपना शिकार पहचान

लेतीं। जब तक मैं लखनऊ में थी, सुन्दरी एक बार भी दीदी से मिलने नहीं आई थी। अब जब वह आने ही लगी थी तो कैसे हो सकता था कि कमल बाबू उससे बेपहचाने रह जाते।

सुन्दरी भी मेरे साथ ही पढ़ती थी। हम दोनों का विषय भी एक ही था। सुन्दरी की इच्छा थी कि वह अंग्रेजी साहित्य ले परन्तु उसके दिमाग में यह बात भी आ गयी कि अंग्रेजी साहित्य के नोट्स कौन बनायेगा? यहाँ हिन्दी में तो जो नोट्स मैं बनाऊँगी, उन्हीं से काम चल जायेगा। तकलीफ़ करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

एक दिन सुन्दरी ने मुझे निमन्त्रण दिया कि मैं एक साहित्य गोष्ठी में उसके साथ चलूँ। साहित्य से सुन्दरी का दूर का भी वास्ता नहीं, सिवाय इसके कि उसने एम० ए० में पढने के लिए यह विषय ले रखा है। मेरे बार-बार पूछने पर कि वह मुझे कहाँ ले जाना चाहती है, उसने साहित्य-गोष्ठी का ही नाम लिया था।

मुझे सुन्दरी के साथ जाने में झिझक तो थी, परन्तु बाहर का जीवन देखने की भी प्रबल इच्छा थी। दीदी कभी कमल बाबू के साथ, कभी सास के साथ और कभी उनकी भाभी के साथ बाहर चली जाती। मेरे साथ तो वह कभी-कभी सिनेमा देखने ही जाती थी। यह सिनेमा देखने की इच्छा भी दीदी की तभी तीव्र होती, जब उन्हें मुन्ना की याद सताती। मुन्ना तो लखनऊ में माँ के पास था। उस दिन अपने सारे स्नेह को जिसे वह किसी तरह भी अपने भीतर बाँध कर नहीं रख पाती थी, मुझ पर उड़ेल देती और उस दिन मुझे सिनेमा दिखाना पड़ता। मुझे, कॉलेज में गये एक वर्ष से ऊपर हो चुका था। एम० ए० के अन्तिम वर्ष में पहुँच चुकी थी। गर्मियों की छुट्टियों के बाद यूनिवर्सिटी खुली थी। सुन्दरी एम० ए० के पहले वर्ष में पास न हो सकी थी। यह बात उसके लिए बड़ी मामूली थी। वह यूनिवर्सिटी में बहुत दिनों तक रहना चाहती थी, क्योंकि उसका विचार था कि जितनी स्वतन्त्रता वहाँ है, और कहीं नहीं मिलती। मैं भी

चाहती थी कि जीवन देखूं, घूम-फिर कर देखूं। बचपन में मिली हुई उपेक्षा मेरे मन में भी सुलगती थी। जब से मैं दिल्ली आई थी, माँ के केवल दो पत्र मुझे मिले थे। माँ दीदी को सप्ताह में एक बार पत्र लिखती, मेरे लिए उसमें एक दो पंक्तियाँ रहती। गर्मियों की छुट्टियों में लखनऊ जाने को इच्छा थी, परन्तु माँ और पिता जी मसूरी चले गये, तो मैं और दीदी भी वहीं गये। कमल बाबू भी कुछ दिन के लिए वहाँ आ गये थे। दीदी के स्नेह का वेग तभी से बढ़ गया था, जब से हम मसूरी से लौटे थे।

मसूरी में मुन्ना हमारे साथ दो-ढ़ाई महीने रहा था हम दिन भर उसके साथ खेलतीं, बातचीत करतीं। दीदी तो हर क्षण उसी के साथ व्यस्त रहती, मैं तो फिर भी किसी समय किताबों से उलझ लेती थी।

कावेरी दीदी को कमल बाबू ने अलग से एक मोटर ले दी थी, जिसमें वह घूमती और कभी-कभी मुझे भी साथ ले जातीं। आज 'नवली कोर्ट' चलने के लिए सुन्दरी ने कहा, तो मैंने उसे सलाह दी कि दीदी से मोटर माँग ली जाये, परन्तु वह नहीं मानी। उसकी आँखों ने शरारत से नाचते हुए कहा था, 'क्यों मजा किरकिरा करती हो ? हम अकेले ही चलेंगे, आने में देर भी हो सकती है।'

सुन्दरी का बात कहने का कुछ ऐसा ढंग था कि मेरे मन में भी हल्की-सी गुदगुदी हो गयी। मैंने सुन्दरी से जब यह पूछा कि मैं क्या पहन कर चलूं तो वह हँस दी—'वाह ! यह भी कोई पूछने की बात है ! कुछ ऐसा पहनो जो तुम्हें दूसरों से भिन्न दिखलाये तुम पैंट, निक्कर या और कुछ ऐसा पहनने से तो रहीं मुझसे क्या पूछ रही हो ?'

मन में एक विचार आया कि वास्तव में यदि साहित्य गोष्ठी ही है तो फिर कुछ भी पहन लो। खैर, मैंने चुन कर हल्के आसमानी रंग की साड़ी निकाली और उससे मेल खाता ब्लाऊज भी निकाला। मेरा

ब्लाऊज एक बहुत अच्छे दर्जी के हाथ का सिला हुआ था। काली हूँ, इस भावना से मैं सिमटती जा रही थी, घबरा रही थी। सुन्दरी ने अपना टूटा हुआ काला हैंडबेग खोला और सिगरेट सुलगा कर पीने लगी। इससे पहले उसने कभी मेरे सामने सिगरेट नहीं पी थी। मैं अवाक् सुन्दरी का मुख देखती रह गयी।

'अरी, क्या देख रही है? तू भी ले।'

'मैं सिगरेट पीऊँगी?'

'क्यों, इसमें क्या हर्ज है?' यह कहते हुए कावेरी दीदी मेरे कमरे में आ गईं। मेरा कमरा पहली मंजिल पर, बरामदे के एक कोने में था। दूसरी ओर दीदी का बीच वाला कमरा, स्त्रियों की बैठक थी। कभी-कभी दीदी की सास आ जातीं तो इसी कमरे में रहतीं। बरामदे में जो दरवाजा खुलता था, वह मैंने बन्द कर रखा था। जाने दीदी को कैसे पता मिला कि हम लोग बाहर जा रहे हैं।

दीदी मुझसे और सुन्दरी से, दोनों से बड़ी हैं। मैं एकदम घबरा गई कि न जाने वह क्या कहेंगी। पर दीदी ने स्वयं सिगरेट माँगी तो सुन्दरी को कोई आश्चर्य नहीं हुआ। उसने मुस्करा कर दीदी को सिगरेट दे दी और माचिस से जला भी दी।

कावेरी ने पूछा—'कहाँ जा रही हो तुम?'

'साहित्य गोष्ठी में', सुन्दरी ने पुरुषों की तरह धुएँ के बादल बनाते हुए कहा।

'तुम वहाँ क्या करोगी?' दीदी के स्वर में आश्चर्य का पुट था।

सुन्दरी ने हँस कर कहा—'मित्रों से, सखियों से मिलूँगी। रस तो नहीं आता, पर वहाँ जाऊँगी तो शाम अच्छी कटेगी, सिगरेट मुफ्त में मिलेंगे और मौका मिलने पर किसी के साथ सिनेमा भी जा सकूँगी।'

सब सुना तो मैं स्तम्भित-सी सुन्दरी को देखने लगी। मुझे डर हुआ—दीदी यह सब सुनने पर कभी मुझे वहाँ नहीं जाने देगी। जाने इस कम्बख्त को क्या सूझी ! क्यों इसने यह सब कह दिया ? मुझे यह देखकर बहुत दुःख हुआ कि दीदी ने एक बार भी नहीं कहा कि 'रानी, तुम ऐसी जगह मत जाओ।' वह सिगरेट पीती हुई बाहर बरामदे में चली गई।

दीदी के जाते ही सुन्दरी ने मुझ से पूछा, 'तुम्हारी बहन के फिर बच्चा होने वाला है ?'

'नहीं तो।'

'तुम बुद्धू हो। तुम्हें कुछ मालूम नहीं। देख लेना, मेरा अनुमान ठीक होगा।'

'तुम्हें यह बाते कैसे पता चल जाती हैं ?'

'क्यों, मेरी आँखें नहीं हैं ?'

'हैं तो, सुन्दर भी हैं।'

'कुछ पुरुष ऐसा कहते हैं और मैं उनके इस कहने का पूरा-पूरा फ़ायदा उठाती हूँ। तुम्हारी आँखें भी तो सुन्दर हैं। तुम भीरू हो, तुम्हें कितने अवसर मिलते हैं, तुमने कभी कोई फ़ायदा नहीं उठाया। डरपोक कहीं की !'

मेरा मन सुन्दरी की बात सुनकर घृणा से भर उठा। मैं अपने एकाकीपन से तंग आ चुकी थी। मेरा मन घर की चहार-दीवारी से ऊब गया था, दीदी की सास से ऊब गया था। वही पुरानी बातें करती, 'बहू, तेरे ससुर ने इतना कमाया है कि जब मैं जवान थी, मुझ से सम्भालना मुश्किल हो जाता था। मैं रुपया गिनती नहीं थी, तोल कर रख लेती थी। मैं सारा रुपया साड़ियों में, सैंडिलों में ही नहीं उड़ा देती थी, उसका सोना खरीदती थी। यह सोना ही बाद में मेरे काम

आया।'

बार-बार एक ही बात सुनते-सुनते मेरे कान पक गये थे। जब भी वह कावेरी से मिलने आती, सदैव उनके हाथ में सोने की चूड़ियाँ झूलती होती, नये डिजाइन के कड़े होते। बुढापे में भी वह सब पहनने से बाज न आती। मुन्ना के गोद दिये जाने पर वह बहुत नाराज थी—'पहला ही लड़का गोद दे दिया! एक बार यह भी नहीं सोचा कि अपनी बच्ची की क्या दशा होगी। उसकी गोद सूनी कर दी।'

दीदी की बेरुखी पर मैं खीझ उठती। इतनी उपेक्षा क्यों दिखलाती हैं? इसीलिए कि मैं इन के घर में रहती हूँ। बचपन की सारी उपेक्षा मुझे याद हो आई। मेरा मन विद्रोह से भर उठा।

शीशा देखा, रंग साँवला था किन्तु मुख पर एक चमक और लावण्य आ गया था। लखनऊ की अपेक्षा यहाँ दिल्ली में मेरा जीवन अधिक सुखी हो गया था।

मैं और सुन्दरी जब 'लवली कोर्ट' पहुँचे तो छः बज चुके थे। मेर हृदय जोर-ज़ोर से धड़क रहा था। कॉलेज की वाद-विवाद-समिति की मैं मन्त्री रह चुकी थी, बहुत बार चार-पाँच सौ आदमियों के बीच बोल चुकी थी, परन्तु वहाँ तो लोग मेरी शिक्षा और बुद्धि की परीक्षा करते थे। यहाँ वह बात तो न थी कि लोग मेरी वेष-भूषा में या मेरे सौन्दर्य में अधिक दिलचस्पी रखें। यहाँ के विषय में सुन्दरी से सब सुन ही चुकी थी। 'लवली कोर्ट' उच्च मध्यवर्गीय लोगों और कुछ बहुत बड़े सिफारिशियों के रहने का छात्रावास जैसा स्थान है। एक बड़े-से कमरे में सुन्दरी मुझे ले गई। बरामदे से ही मुझे बहुत से स्वर एक साथ सुनाई देने लगे थे, जोर की बहस चल रही थी। मुझे हल्का सा इतमीनान हुआ—चलो. अच्छा है, कम-से-कम लोग मुझ में तो दिलचस्पी नहीं दिखलायेंगे।

हम दोनों के कमरे में दाखिल होते ही बहस जहाँ-की-तहाँ रुक

गई। मेरा दिल एकबारगी बहुत जोर से धड़का, फिर भी मैंने हिम्मत से काम लिया और सुन्दरी के सबसे परिचय करवाने पर, मैं हाथ जोड़-जोड़ कर नमस्कार करने लगी। मैं हाथ जोड़ती, दूसरे लोग हाथ बढ़ा देते—हाथ मिलाने के लिए। विवश हो मुझे भी हाथ मिलाना पड़ता।

एक कोने में एक पुरुष खादी का पायजामा कुरता पहने बैठा था। वह दूसरों से हट कर बैठा धीरे-धीरे पान चबा रहा था। केवल उसने हाथ नहीं मिलाया : जैसे ही मैंने हाथ जोड़े उसने भी प्रत्युत्तर में नमस्कार कर दिया।

यह देख कर मुझे हैरानी हुई कि अधिकांश लड़कों ने खादी की कमीजें पहन रखीं थीं और कार्डराय की पतलूनें—चाहे उनका आचार-व्यवहार, बातचीत करने का तरीका सब कुछ आधुनिक ढंग का था। सबने मुस्करा कर और सौहार्द्र भरे वाक्यों से मेरा अभिनन्दन किया। इस बात से मुझे बड़ा साहस मिला कि किसी ने मेरी खिल्ली नहीं उड़ाई, किसी ने यह नहीं कहा, इस लड़की का विवाह कैसे होगा ? हाय राम ! इतनी काली ! यह साहित्य गोष्ठी कैसी थी ? कुछ पुरुष शराब के गिलास लिये बैठे थे। एक दो लड़कियाँ भी मदिरा-पान कर रही थीं और कुछ काफी पी रही थी। प्रत्येक व्यक्ति का हुलिया अस्त-व्यस्त था। किसी की दाढ़ी बढी हुई थी तो किसी की मूछें बढ़ी हुई थीं। केश तो सभी के बिखरे-बिखरे बेतरतीब थे। पुरुषों के हाथो में बड़े-बड़े काले या ब्राऊन चमड़े के बेग थे, जो कागजों से ठसाठस भरे थे। शायद वे बेग गोष्ठी में ले कर ही केवल इसलिए आते थे कि दूसरे देखने वाले देख लें कि वे लोग कितना काम करते है, कितना पढ़ते हैं, कितना लिखते हैं !

पन्द्रह-सोलह वर्ष से लेकर चालीस वर्ष तक की उम्र की महिलाएँ वहाँ उपस्थित थीं। प्राय: सभी कानों में नकली सोने की बालियाँ पहने थी। उनकी साड़ियाँ फटी-पुरानी थी। उनके पाँव की चप्पलें

भी पुरानी और टूटी-फूटी थीं। किसी के केश लम्बे थे, कन्धे पर झूल रहे थे, किसी के इतने छोटे थे कि पहिचानना मुश्किल था कि वह लड़का था या लड़की। मुझे बाद में पता चला कि फटे-पुराने कपड़े पहनना, बेतरतीब केश, यह सब जानबूझ कर किया जाता है। कुछ लड़कियाँ लड़कों के कन्धों पर हाथ रखे हुए थीं। एक लड़की सिगार पी रही थी। मैंने बहुत-सी लड़कियों को सिगरेट पीते देखा है, पर सिगार पीते पहली ही बार देखा। मिचली-सी हो आई। वह लड़की मरियल-सी, दुबली-पतली-सी दिखती थी। सुन्दरी ने मुझे उससे मिलवाया। वह जिस लड़के की कुरसी के हत्थे पर बैठी थी, वहाँ से उठकर मेरे पास आ गई। मेरे पास खड़ी हुई तो लगा कि जैसे उसने शराब पी रखी हो। उसने बड़ी ही कुत्सित हँसी हँस कर सस्ती लिप-स्टिक से रंगे होठों को जरा टेढ़ा करके, गाढ़े लाल रंग से रंगे आध इंच लम्बे नाखूनों वाला हाथ बढ़ा दिया और सुन्दरी के मुख के पास मुख ला कर बोली, 'अरे सुन्दरी! यह नयी रंगरूट कहाँ से लाई हो?'

सुन्दरी ने मुँह पर अंगुली रख कर सब को चुपाते हुए कहा, 'इनका परिचय तो सुन लीजिए। इस तरह चिल्ला-चिल्लाकर पीछे बोलियेगा।'

सुन्दरी का इतना कहना था कि सब चुप हो गए।

'यह रानी है, इन्टलैक्चुअल है, लिखती है, कमल बाबू की साली है।'

'कौन? वह रईस कमल?' एक लड़का बोला। लगता था उस लड़के ने कई दिन से खाना नहीं खाया था। उसके गाल पिचके हुए थे और आँखों पर मोटे शीशे का चश्मा लगा था, जिसकी एक कमान टूट कर कहीं गिर चुकी थी।

'हाँ।'

वही लड़की, जिसका सुन्दरी ने मेरे साथ परिचय करवाया था, आगे बढ़ी, 'रानी, मैं प्रेमा हूँ। 'फैशन कॉर्नर' में डिजाइनर का काम करती हूँ।'

प्रेमा ने हाथ बढ़ाया, उसकी अँगुलियाँ 'निकोटिन' से पीली पड़ी हुई थीं। हाथ, पतले-पतले थे और हाथों की हरी नसें उभरी हुई थीं। नाखून इतने बड़े-बड़े थे कि मुझे भय था, कहीं मेरे हाथ में चुभ न जायें। वही हुआ। उसने हाथ इस जोर से मिलाया कि नाखून मेरी हथेली में चुभ गए और शायद उसकी हड्डियाँ कड़कड़ा उठीं।

सुन्दरी ने मेरा परिचय कुछ इस ढंग से दिया कि कमल बाबू का नाम सुनते ही कुछ लोगों के कान खड़े हो गये।

प्रेमा धीरे से मेरी ठोड़ी ऊपर उठाती हुई बोली, 'तुम क्या पिओगी ?'

मेरी जगह सुन्दरी ने उत्तर दिया, 'काफी।'

'वाह! अमीर आदमी काफी पीते हैं कहीं ?' प्रेमा ने व्यंग्य किया।

'नहीं, यह जरा पुराने विचारों की है। फिर पहली बार ही बाहर आई है, इसे आज काफी ही दो।'

वह लड़की मेरे लिए काफी ले आई। उसके मुख पर कुछ ऐसा भाव था मानो मैं बिल्कुल ही अनाड़ी और पिछड़ी हुई हूँ। काफी देते हुए वह धीरे-से बोली, 'तुम्हारे जीजा बड़े दिल वाले आदमी हैं। मैं भी छः महीने उनके साथ रह चुकी हूँ। मुझे उन्होंने रैम्स होटल में रखा था। छः महीने चुटकी में समाप्त हो गये। आजकल मैं एक चित्र-कार के साथ हूँ। वह मुआ मेरी आमदनी पर भी हाथ साफ करता है।'

कमल बाबू इस प्रेमा के साथ रैम्स होटल में रहते थे—छीः

छी: ! यह लड़की तो घृणित लगती है। मेरी त्वचा जरूर काली है, परन्तु मैं घृणित नहीं हूँ। मैं तो सभ्य हूँ। भगवान जाने वह इसके साथ कैसे रहे होंगे ? प्रेमा ने अपनी कुरसी मेरे पास खिसकाते हुए कहा, 'जानती हो आजकल कमल बाबू सुन्दरी के साथ रहते हैं ?'

मैं जैसे आसमान से गिरी। वह मेरी ओर बिना देखे धुएँ के छल्ले बनाती रही। फिर धीरे-से फुसफुसाते हुए बोली, 'वह इसे रैम्स होटल में नहीं रखते, भले ही यह मुझ से ज्यादा सुन्दर है।'

मैंने साहस कर पूछा था, 'यह कहाँ रहती है ?'

'यह और तीन लड़कियों के साथ रहती है। इन्होंने कनॉट प्लेस के पास ही एक कमरा किराये पर ले रखा है, जिसका किराया कमल बाबू देते हैं। उस कमरे का किराया डेढ़ सौ रुपया महीना है।'

'सुन्दरी की तो बहन यहीं रहती थी न ?'

'हाँ, इसने दो वर्ष से बहन के पास रहना छोड़ दिया है। फिर बहन का काम तो इसको दिल्ली में लाना था। अब इसे आए हुए चार वर्ष से ऊपर हो गये, पर अभी तक भी यह अपना सिलसिला न ढूंढ़ पाई। यह इसकी कमजोरी है, बहन की नहीं।'

'सिलसिला' और 'कमजोरी' शब्दों ने मेरे हृदय पर एक अजीब प्रभाव डाला। मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मेरे मुख का स्वाद कार्फी से भी कड़वा है। मेरे दिमाग में सबसे पहला जो विचार कौंधा, वह यही था कि क्या दीदी इस कांड को जानती हैं ? क्या उसे पता है कि उसके पति एक-न-एक लड़की को रखते हैं ? क्या यहाँ यही फैशन है कि अमीर पुरुष अपनी पत्नी के अलावा एक-न-एक लड़की भी रखे ? क्या यह सब करना भी सभ्यता में आता है ? मेरे मन में एकाएक बहुत से प्रश्न उभर गए।

प्रेमा अभी और बातें करती कि डाक्टर इन्द्रधनुष आ गये। तब

स्त्री-पुरुष आदर से खड़े हो गये। डाक्टर इन्द्रधनुष यही पैंतालीस वर्ष या इससे कुछ अधिक आयु के होंगे। वह भी खादी का कुर्ता और धोती पहने थे। आँखों पर बहुत मोटे शीशे का चश्मा लगा था। बाल खिचड़ी थे। उनके मुख पर एक अर्थपूर्ण मुस्कराहट खेल रही थी, जो उनके सज्जन होने में सन्देह नहीं उपजा पाती थी, बल्कि देखने वाले की इस धारणा की पुष्टि ही करती थी। प्रेमा ने मेरा परिचय उनसे करवाया, और जैसे मेरे पास बैठना उनका विशेषाधिकार हो, वह मेरे पास बैठ गये और बातचीत करने लगे। मेरी पढ़ाई-लिखाई के सम्बन्ध में पूछताछ की, मेरी रचनायें पढ़ने का अनुरोध किया।

बातचीत के दौरान में वह बोले, 'यह भारत है, नहीं तो मुझ जैसे लेखक को किस बात की कमी हो सकती है। मैंने छः उपन्यास लिखे हैं। मेरा सबसे पहला उपन्यास 'कसौटी' कई हजार बिक चुका है। 'प्रेम का भुगतान' की तो आशा है फिल्म भी बन जाये।'

मैंने भी डाक्टर इन्द्रधनुष की दो-तीन पुस्तकें पढ़ी थीं। मुझे उनकी शैली बड़ी प्रिय थी। मेरा विचार था कि वह बड़े ही ठहराव वाले लेखक होंगे, शान्त प्रकृति के और दिखावा, कृत्रिमता उन्हें नापसन्द होगी। यहाँ बात ही दूसरी थी। वह हर बात को बढ़ा-चढ़ा कर कह रहे थे। मेरे यह बतलाने पर कि मैंने उनकी तीन-चार पुस्तकें नहीं पढ़ी, वह कुछ नाराज़ से हो गये और बोले—'कल तुम मेरे यहाँ आओ! मैं तुम्हें अपनी पुस्तकों का पूरा सेट दूँगा। पढ़कर तुम आलोचना लिखो। तुम्हारे जैसी पढ़ी-लिखी लड़कियों को साहित्य के क्षेत्र में आना चाहिये। मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि तुम लिखती भी हो।'

मैंने छिपी-छिपी निगाहों से देखा—कमरे में बैठे अन्य स्त्री-पुरुष मेरी ओर अर्थ-पूर्ण दृष्टि से देख रहे थे। उस दिन की बैठक के बाद

जब मैं सुन्दरी के साथ घर लौटी, तो मार्ग में उसने मुझे बतलाया कि डाक्टर इन्द्रधनुष साहित्य के डाक्टर नही, होमियोपैथी के डाक्टर हैं। कलकत्ते की किसी संस्था से पत्र-व्यवहार द्वारा इन्होंने यह डिप्लोमा लिया था। जब साहित्य में इनकी कोई कद्र नही हुई, तो इन्होंने होमियोपैथी की डिग्री ले ली, परन्तु प्रैक्टिस नही की। अब हिन्दी राष्ट्रभाषा हो जाने से इनका बड़ा नाम है। जो पुस्तकें इनके गोदाम की शोभा बढ़ा रही थी, वही अब लोगों के घरों की आलमारियों में सजी हैं। इनको पारितोषिक भी मिले हैं। सुन्दरी ने यह भी बतलाया कि प्रायः यह स्वयं ही निर्णायक-मण्डल में होते है।

उसी बैठक में डाक्टर इन्द्रधनुष द्वारा एक प्रस्ताव रखा गया था कि नगर के साहित्यकारों की ओर से एक पत्रिका प्रकाशित की जाये, जिसका सम्पादन डाक्टर इन्द्रधनुष करें। उनकी सहायतार्थ साथ में दो-तीन युवक भी रहेंगे। इस पत्रिका के लिए कमल बाबू संरक्षक के रूप में रहें। उनसे रुपया मांगने का काम मैं और सुन्दरी करें।

मुझे यह जान कर भी आश्चर्य हुआ था कि वहाँ सब-के-सब कमल बाबू और सुन्दरी का सम्बन्ध जानते थे, फिर भी किसी ने उसे अनुचित नही माना। उस विषय में बड़े सहज रूप से बातचीत की मानो उसका कोई महत्त्व ही न हो।

मेरी यह धारणा कि साहित्य गोष्ठी में कुछ साहित्य-चर्चा होगी या कुछ लिखा हुआ सुनाया जायेगा, गलत निकली। वहाँ जो लोग इकट्ठे हुए थे वे साहित्य के नाम पर लोगों को धोखा देकर रुपया इकट्ठा करते थे और फिर मिल कर शराब पीते थे। जो स्त्रियाँ एकत्र हुई थीं, उनमें से कुछ तो दुकानों पर 'सेल्स-गर्ल' का काम करती थी, एक-दो अध्यापिकायें थीं। इनमें से एक थोड़ी-बहुत तुकबन्दी कर लेती थी। सुन्दरी ने मुझे बतलाया कि उस लडकी के लिये एक नया कवि कवितायें लिख देता है, जो उसके नाम से प्रकाशित होती हैं, क्योंकि वह लड़की है। डाक्टर इन्द्रधनुष ने भी कहा था कि

उन्हें कवियत्रियों से चिढ़ है, क्योंकि एक-दो को छोड़कर, ये होती कुछ और है, बतलाती कुछ और हैं, और भयानक रूप से नाजुक-मिजाज होती हैं।

उस दिन की गोष्ठी से जब हम लौटे तो, नौ बज चुके थे। दीदी अपनी सास के साथ सिनेमा गई थी। कमल बाबू चुपचाप खाना खा रहे थे। मुझे और सुन्दरी को आता देख क्षण भर के लिये ठिठक गये, फिर सहज मुस्कान से बोले, 'आइये, आप लोग खाना खाइये।'

कमल बाबू को मैं पिछले पाँच-छः वर्ष से जानती थी। पहली बार उस दिन वह मुझे खाना खाने के लिए बुला रहे थे—प्रत्यक्ष में नहीं, परोक्ष में। मैं कुछ देर पहले ही उनके और सुन्दरी के विषय में सुन कर आई थी। मन नहीं हुआ कि मैं वहाँ बैठ कर भोजन करूँ।

मैंने धीरे-से सुन्दरी से कहा, 'तुम खाना खाओ। मुझे भूख भी नहीं है और इच्छा भी नहीं है।'

सुन्दरी कमल बाबू के पास मेज पर बैठ गयी। मैंने छिप कर देखा, दोनों घुल-घुल कर बातें करने लगे थे। उन्हें यों बातें करता देख अवसाद से मेरी आँखों में आँसू आ गये।

मैं बहुत देर तक रोती रही। दस बजे के लगभग जब दीदी लौटी तो सुन्दरी और कमल बाबू वहाँ से जा चुके थे।

मैं उस रात दीदी से कुछ न कह सकी। भोजन भी न कर सकी, सोई भी बहुत देर से। मुझे जैसे अनजाने में ही कोई बचपन से खींच कर जवानी में ले आया था। दीदी ने कमल बाबू के विषय में पूछा भी नहीं। केवल नौकर से इतना भर पूछा, 'साहब ने खाना खा लिया?'

उसके 'हाँ' कहने पर स्वयं खाने बैठ गयीं। नौकर ने बतलाया कि मैंने नहीं खाया, तो दीदी ने पूछा नहीं कि क्यों नहीं खाया, या मैं बीमार तो नहीं हूँ या मुझे कुछ हो तो नहीं गया है? इस उपेक्षा

से मैं और भी विक्षिप्त हो उठी। निश्चय कर लिया कि अपने पैरों पर खड़ी हो जाऊँगी, यह घर छोड़ दूंगी।

मेरे दिमाग में यह बात भी आई—हो सकता है कि कहा जाय कि इसने बहन की उपेक्षा से तंग आकर घर छोड़ दिया। घर पर माँ मेरी परवाह नहीं करती, चुपचाप कोने में दुबक कर भी मैं सिमटी-सी पड़ी रही हूँ, किसी ने नहीं पूछा, तो मैंने भी बुरा नहीं माना। चाँदी मुझे दिलासा देती रहती। चाँदी तब तक माँ के पास मुन्ने को ही देखती थी। हमें आशा थी कि शीघ्र ही कोई-न-कोई ऐसी आया मिल जाएगी जिसे माँ के पास भेज हम लोग चाँदी को अपने पास बुलवा लेंगे।

वह रात मेरे जीवन में बड़े महत्त्व की रात थी। दीदी अपने कमरे में पड़ी सो रही थी। वह पति के व्यवहार से सन्तुष्ट थी, या यों कहिये कि अभ्यस्त हो चुकी थी और पति सुन्दरी शर्मा के साथ जाने किस जगह पड़े थे। बड़ी रात गये मुझे ऐसे लगा जैसे कमल बाबू का सुन्दरी के साथ जाना दीदी के प्रति इतना बड़ा अन्याय नहीं, जितना माँ के प्रति है। माँ अपने दामाद को भावना के फूलों में तोलती रही है। दामाद जहाँ पाँव रखे, वहाँ पलकें बिछाती रही है और मुझे दुत्कारती रही है।

खाट पर लेटे-लेटे जैसे मेरे मन के अंधेरे में उजाला हो गया, प्रकाश फैल गया। मैंने सोचा कि मैं भी एक लम्बा-सा पत्र लिखकर माँ को जतला तो दूँ कि उनके लाड़ले दामाद क्या-क्या खेल रच रहे हैं। तमाम उधेड़बुन के बाद मैं चुप रह गई।

५

यातना मनुष्य को तपा कर सोने-सा खरा बना देती है, यह जन-साधारण की धारणा है, जो प्रायः सत्य लगती है, परन्तु कभी-कभी झूठ उतरती है। मेरा विचार है कि यातना सहते-सहते मनुष्य तंग आ जाता है, तो चिड़चिड़ा हो उठता है और कभी-कभी हीन हरकतें करने लगता है। यातना नहीं, प्रसन्नता मनुष्य को सुखी कर, संतुष्ट कर, अच्छा बना देती है। सुख में मनुष्य अपने मन से दूसरों के प्रति द्वेष और स्पर्धा का भाव धो डालता है। कावेरी दीदी का भी स्वभाव बदल गया था। विवाह के बाद वह मेरे प्रति सदय हो गयी थी, कोमल हो उठी थीं। कमल बाबू का व्यवहार दीदी के प्रति बदल गया था। मन-ही-मन दीदी बहुत दुःखी रहती, मुझसे बात करते उन्हें झिझक होती थी। अब अपने दुःख से दुःखी होकर दीदी ने सिगरेट पीना आरम्भ कर दिया था। अभी तक सास से चोरी-चोरी पीती थीं, परन्तु कमल बाबू के सामने पीने लगी थी। उन्होंने देखा भी, परन्तु मना नहीं किया। उन्होंने पूछा भी नहीं कि सिगरेट कैसे पीना शुरू कर दिया। मैंने भी समझ लिया कि सुन्दरी ने बतला दिया होगा। मेरे मन में बार-बार यह विचार आता—क्यों न दीदी से कहूँ कि यह गोरी-सी सुन्दरी दिल की बड़ी काली है। कई बार सोचा, अवसर भी मिला, किन्तु न जाने क्यों शालीनता मेरा मुँह बन्द कर देती।

मैं कुछ भी नहीं कह सकी थी। मैंने मन पढाई में लगाना चाहा। चाह कर भी प्रयत्न से मैं अपनी पूर्ण शक्ति इस बार पढ़ाई में नहीं लगा पा रही थी। सुन्दरी मिलने के बहाने घर पर समय-असमय आती रहती और कमल बाबू से जान-बूझकर बातें करती। मेरे और सुन्दरी के कहने पर कमल बाबू ने पाँच हजार रुपये डाक्टर इन्द्रधनुष को पत्रिका निकालने के लिए दिये थे। मैंने कमल बाबू से स्पष्टतः

कुछ नहीं कहा था। मैंने तो सुन्दरी की ओट में खड़े होकर बात की थी। रुपए सुन्दरी ने ही माँगे थे। पत्रिका का प्रथम अंक अभी तक नहीं निकला था।

सुन्दरी जब-जब मुझे मिलने आती, उन साहित्यिकों का कोई-न कोई नया समाचार देती। उसकी बातों से मेरी दिलचस्पी भी उनमें बढ़ती जा रही थी। मेरे मन में तरह-तरह की बातें उठतीं। मेरा भी जी चाहने लगा था कि पढ़ाई छोड़ कर मैं भी साहित्य-जगत् में कूद पड़ूँ, जहाँ सब कुछ अनोखा और अद्भुत है। अपने परिवार से भी मेरा मन अत्यन्त दुःखी हो गया था। पिता जी के पत्र दिनों-दिन छोटे होते जा रहे थे। इस प्रौढ़ावस्था में उनकी पुत्र की चाह पूरी हुई थी। भला उन्हें अब इतनी फ़ुरसत कहाँ रह गई थी कि मुझे भी लम्बे-लम्बे स्नेह भरे पत्र लिखते! उन्होंने किसी पत्र में भी यह नहीं लिखा था कि परीक्षा के बाद मैं लखनऊ आ जाऊँ। वास्तव में मुझ-जैसी काली लड़की को घर से विदा देकर वे दायित्व-मुक्त हो गये थे।

पिता जी से मुझे कभी भी ऐसे व्यवहार की आशा नहीं थी। पिता जी भी मेरे लिए बिलकुल माँ की तरह हो गये। मुझे लगा—सारा संसार पराया है। जिन्होंने जन्म दिया, जब वे ही अपने नहीं, फिर कौन अपना होगा?

विवाह से पूर्व दीदी को माता-पिता का सारा लाड़-प्यार मिला था। विवाह के शुरू के पाँच वर्ष कमल बाबू ने उन्हें बड़े मान से रखा था। अब दीदी के दूसरे प्रसव के दिन निकट आ रहे थे। कमल बाबू पूरा दिन और कभी-कभी रात्रि-भर बाहर रहते, जब लौटते भी तो कभी दीदी से उनका हाल जानने की कोशिश उन्होंने नहीं की। न जाने क्यों मुझे दीदी के दुःख से दुःख नहीं था, सहानुभूति नहीं थी। शायद उन दिनों मेरी मानसिक अवस्था ही ऐसी थी कि हर किसी के

दुःख से अधिक महत्व में अपने दुःख को देती थी। यह कमजोरी मुझ में अब भी उतनी ही है, जितनी पहले थी। बचपन का दीदी का व्यवहार मुझे आज भी खलता है। उस गोष्ठी में जाने के बाद मुझे ऐसे लगता था, जैसे मेरा अलग व्यक्तित्व है, जिसका किसी तरह भी घर में आदर नहीं हो पा रहा, जो होना चाहिए था। प्रायः प्रत्येक युवती के जीवन में ऐसे क्षण आते है, जब उसे लगता है कि उसका जीवन व्यर्थ जा रहा है। जितना सम्मान उसका बाहर वाले करते हैं, उतना घर वाले नहीं करते। मेरे मन में तब तक कुछ भी बात साफ नहीं हुई थी। भविष्य में मे क्या करना चाहती हूँ, यह भी तब तक मैंने निश्चित नही किया था। मनुष्य सोचता कुछ और है, होता कुछ और है। मे निश्चय कर भी लेती तो क्या होता ? पिता जी जो बिलकुल अपने थे, लगता था, पराये हो गये थे। दीदी का ध्यान अपने पर ही इतना केन्द्रित रहता था कि उनसे अधिक कहना-सुनना उचित नहीं लगता था। पढाई मैंने जैसे-तैसे पूरी की और लडखड़ाते हुए परीक्षा भी दे दी। परीक्षा से पूर्व मेरा मानसिक आवेग इतना बढ़ गया था कि मुझे रात को नीद भी नही आती थी। जो लेडी डॉक्टर नित्य दीदी को देखने आती, मेरा निरीक्षण भी कर जाती।

डॉक्टर ने दीदी की आर्थिक स्थिति देखते हुए राय दी कि हम मसूरी चली जायें, वहाँ दीदी का प्रसव ठीक से हो सकेगा। दिल्ली में गरमी बढ रही थी, दीदी को सिगरेट पीने से और भी गरमी लगती। डाक्टर का कहना था कि मे भी दीदी के साथ चली जाऊँ, मुझे भी आराम मिलेगा। मेरा बुखार कम हो जायेगा। जो थोड़ी शारीरिक कमजोरी आती जा रही थी, वह भी दूर हो जाएगी। दीदी को यह बात पसन्द आ गई। वह पति की उपेक्षा से तंग आ चुकी थी। अभी तक दीदी ने पति की उपेक्षा को स्वीकार नही किया था। वह आया और नौकर को सुना कर बात कहती, इतने ऊँचे से, केवल मेरे सुनाने के लिए कहती। उनका विचार था जैसे मे बच्ची

थी और कमल बाबू का व्यवहार समझना मेरे लिए मुश्किल था। जयसिंह घर में बहुत पुराना नौकर था। वह कमल बाबू को दीदी से अधिक पहचानता था। दीदी जब उसे समझाने के लिए कहती, 'तुम्हारे मालिक को आजकल काम बहुत हो गया है, जयसिंह। उन्होंने एक और दूकान खरीद ली है जिससे काम और भी बढ़ गया है,' तो जयसिंह अर्थ-पूर्ण मुस्कान के साथ मुस्करा देता, जिसका अर्थ सिवाय मेरे और कोई नहीं समझता था। वहाँ ऐसा था कौन, जो समझता।

डाक्टर की बात कमल बाबू तक पहुँचाने के लिए दीदी और मैं दो-पहर रात तक जागते रहे। कमल बाबू तो दिल्ली से जल्दी-से-जल्दी दीदी को दूर कर देना चाहते थे, लेकिन माँ की शर्म से वह कुछ कर नहीं पा रहे थे, नहीं तो स्थिति यह हो गई थी कि वह दीदी को अब एक क्षण भी पास नहीं रखना चाहते थे।

कमल बाबू को मुँह-माँगा वरदान मिल गया। उन्होंने दीदी को आश्वासन दिया कि वह उनके लिए एक बंगले का प्रबन्ध कर देंगे। उनकी राय थी कि हम दोनों बहनों को शीघ्र प्रस्थान कर देना चाहिए। कमल बाबू ने यह पूछना जरूरी नहीं समझा कि डाक्टर की राय में कहीं गड़बड़ तो नहीं? दीदी के शरीर में रक्त की कमी तो नहीं हो गई?

यदि सांसारिक सुख की बात करूँ तो कावेरी दीदी के घर में मुझे वह सुख था, जो अपने पिता के घर में कभी नहीं मिला था। फिर भी मैं इस बात को भूलती नहीं थी कि मेरी स्थिति उन लोगों से अच्छी न थी जो कभी-कभी दीदी के घर में आकर महीनों पड़े रहते थे। उनकी खातिर भी वैसी ही होती थी, उनकी देखभाल भी नौकर वैसे ही करते, जैसी मेरी करते थे। उस खातिर में चाँदी का स्नेह नहीं होता था, रुपये पाने के एवज में बजाई गई नौकरी-भर होती थी। थका हुआ बेजान परिश्रम! कमल बाबू के एक मित्र

थे—कैप्टन धीरेन्द्र। वह शायद कभी कॉलेज में हाकी की टीम के कैप्टन रह चुके थे। सेना की नौकरी उन्होंने एक घण्टा भी नही की थी। कॉलेज के समय से ही उन्हें कैप्टन पुकारा जाता था। कैप्टन धीरेन्द्र का काम ही ऐसा था कि दूसरों के रुपये-पैसे पर फलते-फूलते थे। कलकत्ता से दिल्ली आते, तो रुपया कमल बाबू से पहले ही मंगवा लेते। उनकी केवल एक ही विशेषता थी कि घर के मालिक को सदैव प्रसन्न रखते, चाहे खुशामद करके, पोलो खेल कर, शतरंज की बाजी हार कर, उड़ती चिड़ियों का शिकार करके या घर की मालकिन के लिए छोटी-से-छोटी, बड़ी-से-बड़ी वस्तुएं खरीद कर। चरित्रहीन मनुष्यों की कोई विशेष श्रेणी नही होती। वे भी सज्जन पुरुषों की तरह, कलाकारों की तरह, अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं द्वारा ही इस संसार में खड़े होने का स्थान पाते हैं।

धीरेन्द्र दीदी के यहां कई-कई दिन आकर रह जाता। वह कमल बाबू के साथ पढता था, हाकी की टीम में भी दोनों साथ-साथ थे। उसी सम्बन्ध को लेकर वह अब भी दिल्ली आ धमकता और महीनों रहता। वह यह खूब जानता था कि दीदी किस बात से खुश होंगी। खाने के समय, तथा उठते-बैठते उनके रूप की प्रशसा करता। हां, कमल बाबू की अनुपस्थिति में ही ऐसा होता, क्योंकि जब वह स्वय रहते, तो किसी की भी इतनी हिम्मत नहीं थी कि वह उनकी पत्नी की प्रशंसा कर जाए और उनके प्रति जरा-सी भी लापरवाही बरते। कमल बाबू के साथ धीरेन्द्र तरह-तरह के सिगरटों का इतिहास एवं गुण बड़े रसीले शब्दों में बयान करता, या फिर उनकी जिन्दादिली का बखान करता। मैं हैरान, मूक रह जाती कि इतनी बड़ी आयु का व्यक्ति ऐसी बहकी-बहकी बातें कर सकता है! उस समय कमल बाबू पैंतीस वर्ष के लगभग होगे। धीरेन्द्र की आयु अधिक नही तो इतनी तो होगी ही, चाहे उसके मुख पर अधिक शराब पीने से तथा कभी फाके करने से और कभी मोहन-भोग खाने से एक प्रौढ़ता-सी

आ गई थी। कभी सोचती—यह निरुद्देश्य जीवन लेकर धीरेन्द्र कब तक घूमता रहेगा। यह भी कोई जीवन है कि होटलों में रहे, अस्पताल में मर जाये ! न घर का, न घाट का। शायद ऐसे व्यक्तियों का सारा संसार ही परिवार होता है, जहाँ रहते हैं वहाँ इनको अपनों की कमी नहीं रहती। मजे की बात यह है कि मौका पाते ही वह सार्त्र और मार्क्स पर भी बात करने लगता। तब तक मैंने मार्क्स पढ़ा नहीं था, संगीत और साहित्य में लगी रही थी या अपने व्यक्तिगत दुःखों के विषय में सोचने में संलग्न थी।

कावेरी दीदी और धीरेन्द्र में कई बार घंटों बातें होतीं—छोटी-छोटी गृहस्थी की बातें। दीदी कला, धर्म, साहित्य या राजनीति पर तो बातचीत कर ही नहीं सकती थीं। उनका दायरा कोयले का भाव, मटर शिमला की अच्छी होती है या लखनऊ की, यह भी नहीं था। वह तो अपने आभूषणों की, साड़ियों की तथा ब्लाऊजों की बात कर सकती थीं। फैशन भी चुनाव तथा रुचि पर निर्भर करता है। रुचि संस्कारों द्वारा नियमित होती है। दीदी की रुचि पर माँ की मोहर थी और फिर ससुराल में आकर कमल बाबू की। पहले वह बाजार-भर में सबसे महंगी वस्तु खरीदना अपना धर्म समझती थीं। अब धीरे-धीरे दिल्ली मे आकर कनॉट प्लेस के बड़े-बड़े कपड़ा बेचने वालों के यहाँ जो कुछ भी नया हो, वही खरीदतीं थीं, चाहे वह उन पर सजता था या नहीं।

धीरेन्द्र मेरे मुख पर मेरी भी खूब तारीफ करता। दीदी ने शायद उससे यह कह रखा था कि मैं दीदी को प्रिय थी, वह मेरे बिना रह नहीं सकती थीं। इसीलिए मुझे लखनऊ से यहाँ पढ़ने को ले आई थी। दीदी ने यह भी कहा था कि हमारे माता-पिता ने रानी के दिल्ली आने का बहुत विरोध किया था परन्तु वह किसी तरह मानी ही नहीं। हो सकता है, दीदी ने शायद यह भी कहा हो कि वहाँ तो घी के दिये जलते हैं। आजकल दिये कहाँ जलते है ! आजकल तो विद्युत के

हजार कैंडल पावर के बल्व जलते हैं। हाँ तो, इसी आशय का कुछ दीदी ने धीरेन्द्र से कहा होगा, क्योंकि बातचीत के दौरान में धीरेन्द्र ने मुझ से कहा, 'रानी, तुम्हें भाभी इतना चाहती हैं, बेचारी ससुराल में भी तुम्हारे बिना रह न पाई। आज कलयुग में इतना स्नेह करने वाली बहन बड़े भाग्य से मिलती है।'

'जी हाँ', मैंने छोटा-सा उत्तर दिया था। मेरी आँखों में बचपन की सब घटनाओं का चित्र खिंच गया। दीदी ने कितना प्यार और कितनी सहानुभूति मेरे प्रति दिखलाई थी। मैं कितनी बार रोई थी।

धीरेन्द्र ही एक ऐसा व्यक्ति तब तक मेरे जीवन में आया था, जिसने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष, जहाँ तक मुझे ज्ञान है, मेरी अवहेलना नहीं की थी। वैसे मेरा विवेक सदैव 'लैम्प-पोस्ट' की तरह मार्ग दिखलाता रहता था। मुझे इस बात का पता था और है कि मैं काली हूँ। तब भी मैंने कभी उन इश्तहारी, काले से गोरे हो जाने वाली दवाइयों का प्रयोग नहीं किया था, और न दूध और वेसन का उवटन ही लगाया था, जो मेरी बुआ मुझ को बार-बार व्यवहार करने के लिए कहती थीं। धीरेन्द्र मुझे रोज देखता था, परन्तु कभी भी ऐसा नहीं हुआ कि वह और कोई बात करने के बजाय मेरी त्वचा को लेकर ही बातचीत चलाये।

केप्टन धीरेन्द्र का वर्णन इसलिए आवश्यक है कि कमल बाबू ने उस को विश्वास-पात्र बना कर मुझे और दीदी को उसके साथ मसूरी भेजा था। मसूरी पहुँच कर उसने अविभावक का स्थान ग्रहण कर लिया था और हमें मकान आदि ढूँढने में सहायता दी थी, फिर सुविधा देखकर साथ ही रहने भी लगा था।

मसूरी मैं उसके पहले भी गई थी— जब माँ और पिता जी वहाँ थे। इस बार दीदी के साथ जाना कुछ और ही महत्त्व का था। सबसे बड़ी बात इस बार थी—मेरा परिवर्तित दृष्टिकोण। मन-ही-मन अब मैं कुछ कर गुजरने की इच्छा लिए थी। मैंने तय कर लिया था

कि मैं इस बार केवल दीदी की देखभाल करने में ही समय न खोऊँगी। हुआ भी वही। मेरे सौभाग्य से माँ ने चाँदी को मसूरी भेज दिया। चाँदी इस बार आई तो माँ के पास लौटी नहीं। आज उस बात को लगभग चार-पाँच वर्ष हो चुके हैं। चाँदी मेरे पास ही रहती है। अब वह बूढ़ी हो गई है, परन्तु अभी भी घर का सारा काम वही निबटा लेती है। चाँदी के घर में आ जाने से जो थोड़ा-बहुत काम मैं करती थी, वह भी छूट गया। वह दीदी को और मुझे मुंह-अँधेरे, सुबह के पाँच बजे के लगभग चाय बना कर देती और फिर हम सब के स्नान के लिए पानी गरम करती। केप्टन धीरेन्द्र को तो नौ बजे सोकर उठने की आदत थी। वह रात-रात भर घूमता रहता, नहीं तो बीती रात तक ताश खेलता रहता। कभी-कभी तो दीदी भी साथ में ताश खेलती। चाँदी भी साथ देती। अनपढ़ चाँदी जब फ्लैश और ब्रिज खेलने लगती, तो मुझे बड़ी हँसी आती। इन खेलों से सम्बद्ध अंग्रेजी के दो-चार शब्द भी उसने सीख लिए थे। वह खेल में जीत रही है या हार रही है, इसका भी उसे ज्ञान न रहता। मैं मन-ही-मन सोचती—हमारा घर किसीभी विदेशी से कम नहीं है। हम भी नौक-रानी को साथ बिठला कर ताश खेलते हैं। बस—खाना मेज पर बैठकर वह हमारे साथ नहीं खाती थी।

मुझे लगा कावेरी मसूरी में पहुँचते ही जैसे कुछ मानसिक शृंख-लाओं से मुक्त हो गई थी। उसका मन एक अजीब स्वच्छन्दता का अनु-भव करता जो उसने पहले कभी नहीं अनुभव की थी। इस बार जो घर हमने किराये पर लिया वह लायब्रेरी के बाईं ओर जाने वाली छोटी-सी सड़क पर था। माल रोड हमारे घर से दूर न थी। लायब्रेरी टावर भी पास ही था, बड़े-बड़े होटल भी निकट ही थे। दीदी खर्चीली तो शुरू से ही थीं, अब वह कमल बाबू के और भी विरुद्ध थी, और इस बार उन्हें खर्च करने से कौन रोक सकता था ? हमारे सामाजिक जीवन में सरगरमी आ गई। नित्य या तो हम किसी के यहाँ खाने के

लिए आमन्त्रित होते या कोई हमारे यहाँ होता। इनमें बहुधा ऐसी ही पार्टियाँ होतीं, जहाँ न तो बुलाने वालों को प्रसन्नता होती, न उनको ही जो बुलाये जाते। लोग इसलिए निमन्त्रण नहीं स्वीकार करते थे कि उन्हें उस पार्टी में दिलचस्पी होती, वे केवल इसलिए आते कि उनके नौकरों को उस दिन आराम मिल जाये। बुलाने वाले भी केवल इसलिए बुलाते कि वे अपने मेहमानों के घर पहले भोजन खा चुके होते। बदले में पार्टी देना तो मध्यवर्गीय या उच्चवर्गीय या पूँजीपति समाज का नियम है। इन पार्टियों में स्त्रियाँ प्रायः सज-धजकर गुड़िया-सी बनकर आ जाती हैं और कुर्सियों पर चुपचाप बैठ जाती हैं। कभी धीरे से आपस में एकाध बात कर लेती हों तो गनीमत, वर्ना प्रायः चुप ही रहती। हाँ, एक-दूसरे के गहने-कपड़े खूब ध्यान से देख कर उसके पति का सामाजिक स्तर मन-ही-मन निर्धारित कर लेती। ऐसी पार्टियों में बातचीत के विषय ऐसे ही होते, जिन पर किसी तरह का विवाद न हो सकता हो, किसी तरह की लड़ाई न हो सकती हो। लड़ाई तो खैर अभद्रता की चरम सीमा है। इस समाज के लोग मर कर जीवित हो जायें तो अपने हत्यारे को भी मुस्करा कर 'जी' कह कर पुकारें। दिल में कुछ भी हो, ज़ुबान पर मिठास होनी चाहिए। पुरुष तो फिर भी शराब पी कर कुछ बातचीत करने लगते हैं किन्तु स्त्रियाँ 'बुत' बनी बैठी रहती हैं।

इन पार्टियों में जा कर मुझे लगा, माँ यों ही चिन्ता करती है, किसी भी लड़की के लिए काला होना अभिशाप नहीं। श्रीमती खास्तगीर, श्रीमती घोष और श्रीमती मेनन तो मुझसे भी काली थी। उनको देख कर मेरे मन को शान्ति-सी होती और मैं अनुभव करती कि मैं किसी से किसी भी तरह कम नहीं हूँ। मुझमें बातचीत करने का उनसे अच्छा सलीका था। मैं दुनिया की घटनाओं से अनभिज्ञ न थी। पुरुषों से भी बातचीत कर सकती थी कई बार करती भी थी, क्योंकि पुरुषों की बातचीत के विषयों का मुझे भी पता था। मैं उन विषयों

पर खूब पढ़ती, दैनिक समाचार-पत्र, जो भी हमारे यहाँ आते, मैं खूब दिलचस्पी से पढ़ती। समाज के जिस वर्ग में मैं दीदी के साथ मिलती-जुलती थी उस वर्ग की औरतें अख़बार घर में मंगवाती जरूर हैं, परन्तु केवल उसमें सिनेमा के विज्ञापन या बड़ी-बड़ी दुकानों के विज्ञापन ही देखती हैं। किसी राजनैतिक या अन्तर्राष्ट्रीय घटना में उनकी दिलचस्पी तभी होती है, जब उनके पति का घटना से निकट या दूर का सम्बन्ध हो। किसी कॉन्फ्रेंस में उनके पति भाग लेने जा रहे हों या गये हों तो वह उसका दिन-प्रतिदिन का समाचार रखती हैं। इस वर्ग के लोग दूसरे को भोजन पर तभी बुलाते हैं जब उनका स्वार्थ निहित रहता है। पति अपने अफसर को खाने पर बुलाता है, उसकी पत्नी अफसर की खुशामद करती है। पति अफसर की पत्नी के रूप और सुघड़ता की प्रशंसा करता है, बिना जाने-सुने ही विश्वास के साथ अफसर की पत्नी के मैके वालों की तारीफ करता है या फिर भोजन किसी म्युनिसिपल बोर्ड के प्रेसीडेंट को, केन्द्रीय सरकार के किसी भी सैक्रेटरी को या किसी मन्त्री के उपमन्त्री को खिलाया जाता क्योंकि वह किसी दिन काम आयेगा। काम उससे निकलवाया जाय न, परन्तु उसके काम आने की सम्भावना तो होती है। जहाँ ऐसी कोई आशा न हो, केवल मन्त्री के नाते ही भोजन पर बुलाना हो, उन लोगों को इस वर्ग के लोग बहुत कम बुलाते हैं। ऐसा सोचने से भी इन्हें बहुत से काम याद आ जाते हैं। तब ये एकाएक व्यस्त हो उठते हैं। हाँ, मित्र का सामाजिक स्तर यदि इन मित्र महोदय के स्तर का हो, यदि वह उनसे अधिक रुपये वाला हो, उसके द्वारा अपना नहीं तो दूर के किसी सम्बन्धी का भी काम निकलता हो तो उस सम्बन्धी को आयु भर के लिए अपने एहसान से लादने का केवल एक ही उपाय इन लोगों की समझ में आता है और वह यह कि उस अमीर व्यापारी को खाने पर बुला लेते हैं। जीवन की इस दौड़ में प्रसन्नचित्त यह सब करते हैं और उन्हें इस के लिए खर्च करना भी बुरा नहीं लगता।

वहाँ मसूरी में ही पता चला कि एक वर्मा परिवार एक कुंवर साहब की खुशामद में पिछले छः वर्षों से लगा था। परिवार के लड़के की श्रायु नौ वर्ष की थी। उनका विचार था, श्रब तक भी है कि जिस समय उनका लड़का बीस वर्ष का होगा, कुंवर साहब तब तक मन्त्री के पद पर श्रासीन हो जायेंगे। भविष्य में एकदम दिलचस्पी दिखला कर उनको श्रपना कैसे बनाया जा सकेगा? सबसे श्रच्छा तो यही था कि श्रब वर्षों तक उनकी खुशामद करके वह एक दिन उसको श्रपना बना ही लेंगे। बहुत श्रच्छी तरह तो मैं नहीं जानती, परन्तु शायद श्रभी भी वह कुंवर साहब की खुशामद उसी तरह ही कर रहे है। इस वर्ग की खुशामद श्रौर चिरोरी की कहानी कहाँ तक कही जाये। बच्चों का पेट काट कर श्रफसरों को खिलाते हैं। बच्चा लाख पिस्ते श्रौर बादाम की मिठाई के लिए जिद करे, वह उसे केवल सादी बर्फी खिलायेंगे श्रौर श्रफसर महोदय के घर पिस्ते श्रौर बादाम की बर्फी का डिब्बा भेजेंगे।

६

मसूरी, शिमला श्रौर नैनीताल का जीवन जैसे समतल नगरों के जीवन से भिन्न है, उसी प्रकार यहाँ श्राकर सब लोग किसी श्रौर ही तरह का व्यवहार श्रपना लेते है। कैप्टन धीरेन्द्र की श्रौर दीदी की खूब पट रही थी। दीदी ने माँ से सीखा था कि मुंह में पान दबाश्रो पलंग पर या सोफे पर बैठकर दुनिया भर की बातें हाँक डालो। हाथ में ताश के पत्ते हों या ऊन की सलाइयाँ, हाथ श्रपने श्राप मशीन की तरह श्रलग काम करते रहें श्रौर जुबान श्रपनी जगह काम करती रहे। मैं रोज देखती, हमारी रिश्तेदार श्रौर कुछ भी नहीं करतीं,

केवल चारपाई या सोफ़े पर बैठ कर बात करती। उन्हें दुनिया की और किसी राजनीतिक या कलात्मक घटना से दिलचस्पी न रहती। मैं दीदी और धीरेन्द्र से दूर-दूर ही रहती। जाने क्यों दीदी को मुझे पास देखकर ही क्रोध आ जाता। किसी तरह मैं वह क्रोध सहन करती, अपने कमरे में पलंग पर पड़ कर खूब रोती। मेरा हृदय चीत्कार कर उठता। एक दिन मूसलाधार वर्षा होने के बाद आकाश निखर आया था। अप्रैल के अन्त की वर्षा से शीत बढ़ गया था। मैं हल्के धानी रंग की शाल ओढ कर बाहर घूमने निकल गयी। रास्ते भर सोचती रही कि पुरुष का प्यार क्या केवल दीदी के लिये है? क्या प्रेम पाने के लिए गोरा होना आवश्यक होता है?

मेरे निकट से एक पति-पत्नी निकल गये। पत्नी का रंग साँवला था, उसके मुख पर माता के दाग भी थे। पति उसके साथ खूब प्रसन्न दिखाई दे रहा था। मैंने मन-ही-मन तय कर लिया कि प्रेम पाने के लिए गोरा होना आवश्यक नही। जहाँ तक मैंने सुना था 'लैला' भी काली थी।

मैं लायब्रेरी से दूर बाजार में पहुँच गयी और एक छोटे-से 'काफी हाउस' में घुस गयी। मेरे मन में कही अकारण बेचैनी तथा अदृश्य अकुलाहट थी, जो मैं किसी प्रकार भी शान्त नही कर पा रही थी।

मैंने काफी का आर्डर दे दिया और कुर्सी पर पीठ टेक कर बैठ गयी। न जाने कितने उपन्यासों को मन-ही-मन दोहरा डाला। किसी उपन्यास में किसी काली लड़की की समस्या का वर्णन नहीं किया गया था, किसी ने भी काली लड़की को उपन्यास की हीरोइन नहीं बनाया था। मेरा मन लेखकों के प्रति आक्रोश से भर उठा। सब-के-सब एक जैसे हैं। बंकिमचन्द्र ने अंधी लडकी ले ली। रवीन्द्रनाथ टाकुर ने गूंगी लड़की को चित्रित किया, परन्तु दोनों में से किसी ने भी यह आवश्यक न समझा कि किसी काली लड़की को भी हीरोइन बनायें।

काफी का एक घूंट पीने पर मेरी चेतना ने जैसे मेरे मन से कहा—"तू क्यों व्यर्थ में ही दुःखी होता है, निराशा से टूटता जा रहा है, तुझे चट्टान की तरह ठोस बन जाना चाहिए, ताकि कुछ भी आए, टकरा कर चकनाचूर हो जाए। दीदी का भी कोई जीवन है ? नकेल पति के हाथ में, जिधर उसने घुमाया उधर घूम गई, जितना दुःख उसने दिया सह लिया, मन उबला तो उसकी भाप भी न बाहर आने दी। जिन परिस्थितियों में रखा गया रह लिया। दीदी भी तो पति के टुकड़ों पर जी रही है। घर की चहारदीवारी से बाहर निकलती है तो क्या ? घर में पति द्वारा अपमानित और पीड़ित है। घर से बाहर निकलना ही एक ऐसा अन्तर है जो दीदी को पुराने जमाने की स्त्रियों से अलग करता है। पहले भी नारी की यही समस्या थी कि वह सन्तान को जन्म देती थी, पुरुष उसके शरीर से अधिक उसके व्यक्तित्व को महत्त्व नहीं देता था। नारी की यह समस्या अभी तक ज्यों-की-त्यों ही बनी है।

छीः छीः ! दीदी धीरेन्द्र जैसे उच्छृंखल पुरुष से घुल-घुल कर बातें कैसे करती है ?

मैंने काफी पीनी शुरू की। मेरा मन अवसाद से भर गया। एक तो काफी कड़वी और दूसरे मुंह का स्वाद वैसे ही कड़वा था। बाहर आकाश कुछ स्वच्छ हो गया था। मैंने काफी हाउस के चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। मेरे पास वाली कुर्सी पर एक चित्रकार बैठा था और उसकी बगल में उसका मित्र। चित्रकार के मित्र ने एक चित्र-प्रदर्शनी का विज्ञापन मेरी ओर बढ़ा दिया। प्रदर्शनी एक दिन पहले आरम्भ हो चुकी थी। दोपहर को ग्यारह से एक बजे तक और शाम को तीन बजे से पांच बजे तक खुलती थी। मैंने अपनी कलाई की घड़ी में देखा, सवा ग्यारह बजे थे। चित्रकार के मित्र ने मेरी ओर मुस्करा कर देखा और धीरे से कहा—'आप प्रदर्शनी में जाना चाहती हों तो हम भी वहीं जा रहे हैं, आपके साथ चल सकते हैं।'

मैंने देखा चित्रकार समीरदत्त बहुत ही लम्बा और छरहरे शरीर का था, साथ में वह प्रचार करने वाला मित्र अधिक चंचल और वाचाल। मैंने 'बेयरा' से बिल मँगवाया, तो वह चित्रकार और उसके मित्र की काफी का बिल भी ले आया। मैंने एकबार उन लोगों की ओर देखा कि ये इतने ढीठ भी हो सकते हैं। स्वयं प्रदर्शनी का विज्ञापन दिया और अब अपना बिल आगे कर दिया। वह व्यक्ति जिसने मुझे विज्ञापन दिया था उसका नाम चेतन था, यह उसने पीछे बतलाया

चेतन ने आगे बढ़ कर जरा मुस्कराते हुए कहा—'अरे! प्रदर्शनी का टिकिट भी तो एक रुपया है, वह आप मत दीजिएगा, यह बिल चुका दीजिएगा, केवल बारह आना है। आपको चार आने की बचत हुई।'

मैं हैरान रह गयी। कैसा आदमी है अपरिचित? स्त्री से ऐसी बात करता है? एक मन तो हुआ कि यह विज्ञापन उसके मुँह पर दे मारूँ और अपना बिल चुका कर अपना रास्ता नापूँ। न जाने क्यों मन 'ऐडवेंचर' की खोज में था। मैंने उनका बिल भी चुका दिया।

प्रदर्शनी बहुत दूर नहीं थी। जिस रेस्टराँ में हम लोग बैठे थे, उससे केवल फर्लांग-दो फर्लांग थी। चित्रकार महोदय ने मुझसे बातचीत नहीं की। वह अपना अत्यन्त दुबला शरीर लेकर आगे-आगे चलने लगा। इस सब व्यापार में वह ऐसे चुप था, मानो कुछ हुआ ही नहीं। उसकी गम्भीरता पर मुझे क्रोध भी आ रहा था। प्रदर्शनी के बाहर एक और सूटेड-बूटेड व्यक्ति टिकट बेच रहा था। मुझे चेतन और समीर के साथ आता देख वह अपनी कुर्सी से उठ गया। मुझे हल्का-सा गर्व हुआ, मेरी अहम्मन्यता जरा-सी पसीजी कि चलो कम-से-कम यहाँ तो ऐसा कोई न था जो मेरी उपेक्षा करे। इन लोगों को क्या पता कि घर पर मेरी कितनी उपेक्षा होती है।

प्रदर्शनी के कमरे में जा कर देखा तो एक विदेशी पुरुष और स्त्री घूम-फिर कर प्रदर्शनी देख रहे थे। भारतीय उस कमरे में हमारे

सिवाय और कोई न था। मुझे लोगों पर जरा-सा गुस्सा आया। जाने कला-प्रदर्शनी को लोग महत्त्व क्यों नही देते ? कहीं नाच होगा या कोई ज्योतिषी आया होगा तो हजारों की भीड़ जमा हो जाएगी।

प्रदर्शनी में पहुँचते ही समीर के चेहरे की गम्भीरता कही गायब हो गई। वह बड़े उत्साह से मुझे तस्वीरों का महत्त्व समझाने लगा। वह चित्र न तो फोटो थे, न ही कार्टून। रेखा-गणित की बेजोड़ और असमानान्तर रेखाओं में प्राय: सभी चित्र बने थे। मैंने सुना देखा था कि प्राय: आधुनिक कलाकार आदिवासी जातियों की आदिकालीन कला को अपनाने में ही गर्व समझते है, और टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं द्वारा कुछ चित्रित करते हैं, जिसमें भाव से बढ़कर महत्त्व आकार या रूप को दिया जाता है। 'क्यूबिज्म' की पहेली मेरी समझ में नही आ रही थी। समीर मुझे समझा रहा था—'क्यूबिस्ट' चित्रकार वस्तुओं को. उनकी विशेषता को समझता हुआ उन रेखाओं या कोणों को चुन लेना है, जो वस्तु विशेष की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व कर सके। फिर वस्तुओं के रूप, आकार की जगह वह उन रेखाओं और कोणों को ही इस्तेमाल करता है।

पूरे कमरे भर में माँ और बच्चे वाली तस्वीर को छोड़कर और कोई भी तस्वीर ऐसी नहीं थी, जो समझ में आये। मैंने सोचा, कौन और अपना समय नष्ट करे।

समीर को आशा थी कि मैं प्रशंसा के कुछ शब्द कहूँगी। मुझे चुप देख वह निरुत्साहित हो गया। प्रत्येक तस्वीर पर कीमतें भी लगी थी, किसी का मूल्य पाँच सौ रुपए था,किसी का दो सौ। इन बेढंगी तस्वीरों में से तस्वीर खरीद कर क्या होगा ? कुछ विशेष नही। शायद इन लोगों की दो-चार दिन की कॉफी का प्रबन्ध हो जायेगा।

मैंने समीरदत्त की ओर देखा। वह मेरे चेहरे पर होने वाले भावान्तर को बड़ी बारीकी से पढ़ रहा था।

फिर धीरे से बोला था—'आप कमल बाबू की पत्नी की बहन—

हैं न ?'

मुझे जैसे किसी ने आकाश से ला कर धरती पर पटक दिया। यहाँ भी वही चर्चा। मेरा अस्तित्व मानो कुछ है ही नहीं। यदि कुछ है तो कमल बाबू की वजह से। मैं अपनी मानसिक उधेड़बुन में उसे न उत्तर देती, यह कैसे होता। चित्रकार के प्रश्न का तो उत्तर देना ही उचित था।

'जी हाँ ?'

'एक चित्र खरीद लीजिए न।' चेतन ने सुझाव दिया।

मेरे पास इतने रुपये कहाँ थे। वे दोनों मिलकर मेरा मजाक बना रहे थे जैसे मेरे हृदय पर कोई नश्तर चुभा रहा था।

मेरी सारी हीनता, सामाजिक क्षुद्रता साकार हो कर मुझ पर हँस रही थी, कोंच रही थी। उस समय अपने वास्तविक स्तर से ऊँची सोसाइटी में रहने के कारण, मैं छुई-मुई की तरह बात-बात पर कुम्हला जाती। यह कहना भूल न होगा कि तब तक मुझे जीवन की वास्तविक मान्यताओं का कोई पक्ष नहीं था। कृत्रिम मान-अपमान मेरे लिये बहुत बड़ा मूल्य रखते थे।

सच तो यह है कि वह क्षण मेरे जीवन का बहुत ही अमूल्य क्षण था। उसे सौभाग्य-सूचक कहूँ या नहीं, यह मैं नहीं कह सकती।

चेतन ने एक बार और कहा—

'एक चित्र खरीद लीजिए न।'

जाने उत्तर कैसे मेरी जबान से बन पड़ा—

'मेरे पास खरीदने के लिए दाम नहीं।'

'वाह ! इसी लिये आप चित्र नहीं खरीदेंगी ? कमल बाबू को हम बिल भिजवा देंगे। दाम अपने आप आते रहेंगे। आप चित्र पसन्द तो कीजिए।'

मुझे लगा मेरे हृदय में तीव्र रक्त-संचार होने लगा था।

समीरदत्त ने भी आगे बढ़कर कहा, 'हाँ, हाँ, आप पसन्द कीजिए न।'

प्रदर्शनी में पहुँचते ही मुझे वह चित्र पसन्द आया था, जिसमें माँ बच्चे के मुख की ओर देख रही थी।

मेरी दृष्टि उस चित्र की ओर गयी तो वे दोनों भी उस ओर देखने लगे।

चेतन ने मुस्करा कर कहा—'इसकी कीमत अधिक नहीं है, केवल पांच सौ रुपये है। चलिये आपसे साढ़े चार सौ ले लेंगे। आप हाँ कीजिए। तस्वीर आपके घर भिजवा दी जाएगी और कमल बाबू को टैलीग्रैफिक बिल भेज दिया जायेगा।'

तार द्वारा बिल भेजने की बात मैंने उससे पहले कभी नहीं सुनी थी। यह पहला ही मौका था।

मेरे उत्तर की उन्होंने राह नहीं देखी। एक और आदमी जो पास ही खड़ा था, उसे तस्वीर को पैक करने के लिए कहा गया।

मैंने तो सुना था कि प्रदर्शनी में जो तस्वीर खरीदी जाती है उसे प्रदर्शनी बन्द होने पर खरीदार के पास भेजा जाता है। यहाँ का ढग निराला ही था।

मैंने धड़कते हृदय से घर की ओर रुख किया। वह आदमी मेरे साथ था जिसने तस्वीर पैक की थी।

आते समय चेतन ने पूछा था—'कल काफी हाउस आप फिर आयेंगी न?'

मैंने बात सुनी-अनसुनी कर दी थी।

७

समीरदत्त ने चित्र के साथ अपना कार्ड भी भेजा था, जिसमें शुभ-कामनायें छपी हुई थीं। शायद अपने ग्राहकों की संख्या बढ़ाने के लिए ऐसा किया था, या फिर किसी विदेशी चित्रकार या दुकानदार की नकल की थी।

वह कार्ड साथ में होने से जरा-सी परिस्थिति सुधर गयी, क्योंकि मुझे बहुत-से प्रश्नों का उत्तर नहीं देना पड़ा। कावेरी ने चित्र देखा, कार्ड पढ़ा और अलग रख दिया। धीरेन्द्र तारीफ करने का मौका ढूंढ़ता रहता था, इस बार भी चूका नहीं। उसने चित्र की, मेरी रुचि की और चित्र बनाने वाले की तारीफ की।

मैंने भी वे प्रशंसा भरे शब्द ध्यान से सुने और फिर अपने कमरे में चली गयी। मेरा मन अशान्त था।

दो-तीन दिन तक मैं गुमसुम कमरे में ही पड़ी रही। हर समय दिल धड़कता रहता कि कमल बाबू जिस समय उनके तार का उत्तर नहीं देंगे तो वे अपना चित्र लौटाने के लिए आयेंगे। कावेरी को भी पता चल जायेगा कि यह चित्र मुझे उपहार में नहीं मिला, वरन् खरीदा गया है, वह भी किसी के पैसे से। कावेरी इतनी बड़ी फिज़ूल-खर्ची सहन न कर सकेगी।

चित्र को आये तीन-चार दिन हो चुके थे। उन तीन-चार दिनों में कई बार मन में आया कि धीरेन्द्र को बतला दूं। मुझे धीरेन्द्र से बातचीत करने का समय तो मिला था परन्तु केवल दीदी के सामने, उनसे अलग होकर नहीं। मेरे अपने मन की आशंकायें मुझे कहाँ-कहाँ ले गयी थीं—मेरे लिए आज उन्हें याद कर पाना आसान नहीं है। तब मैंने सोचा था, कावेरी तुरन्त माँ को पत्र लिखेगी और माँ अपने भाग्य को कोसती हुई, मुझे वापिस बुलवाने के लिए पत्र लिखेंगी या

पिता जी लेने आयेंगे। बुरा तो पिता जी को भी लगेगा। चाँदी से मेरी उद्विग्नता छिपी नहीं रह सकी। वह उठत-बैठते मुझसे पूछने लगी—'रानी बिटिया, क्या बात है?'

'कुछ भी तो नहीं।'

'घर से बाबू जी का खत नहीं आया?'

'नहीं।'

'तुम ही क्यों नहीं लिखती, बिटिया? वह अब बूढ़े हो गये हैं, तुम्हें ही लिखन चाहिए।'

'तुम नहीं समझती हो, चाँदी। उन्हें कुछ भी नहीं हुआ। उनको लड़का पाने की इच्छा थी, सो पूरी हो गई। लड़के को पाकर वह भूल गये हैं कि लड़कियाँ भी कोई महत्त्व रखती हैं। फिर काली लड़की...।'

चाँदी बीच में ही बात काट कर बोली, 'तुम पढ़-लिख गई हो, बीबी। अब तुम्हें किस बात की कमी है? तुम जहाँ चाहो जाओ, जो चाहो करो।'

जाने क्यों मुझे चाँदी की यह बात और भी बुरी लगी—'तुम जहाँ चाहो जाओ, जो चाहो करो।' परिवार में स्वतन्त्रता के नारे बुलन्द करना तभी अच्छा लगता है, जब कोई रोक-टोक करने वाला हो। कोई मना करने वाला हो। जहाँ स्वतन्त्रता ही स्वतन्त्रता हो, जहाँ किसी को दूसरे की चिन्ता न हो, वहाँ स्वतन्त्रता अखरती है। यह सोच कर कि हमारा कोई नहीं, जो चाहे सो करें, हमारी सुरक्षा की भावना को ठेस लगती है। तब शायद मन कुछ अनहोनी करने को नहीं करता।

कावेरी मसूरी आ कर थोड़ी देर के लिए माल पर घूमने भी चली जाती, धीरे-धीरे धीरेन्द्र का सहारा ले कर और कभी-कभी चाँदी को साथ लेकर। मुझे साथ ले जाना जैसे उसे अशोभन लगता। मैंने

भी उसके साथ जाने का आग्रह नहीं किया । दिल्ली में कभी-कभी मुझे देख कर जो प्यार का ज्वार उमड़ा करता था, वह शान्त हो चुका था । शायद आने वाले शिशु के प्रति वह अधिक स्नेहमयी हो उठी थी । मुन्ना माँ ने ले लिया था । अब की बार जो शिशु होना था, दीदी को लगता था कि वह उसका सारा अभाव दूर कर देगा ।

मैंने एम० ए० की परीक्षा बहुत ही लड़खड़ाते हुए दी थी । मुझे यह भी आशा नहीं थी कि मेरा परिणाम अच्छा रहेगा । चाँदी की सान्त्वना मुझे बुरी लगती । मुझे ऐसा लगता, मानों चाँदी भी मेरे एकाकी होने से मुझसे उपहास करती है ।

मेरे मन की हालत इतनी कमजोर हो रही थी कि मैंने एक दिन चाँदी से पूछ लिया, 'सच कहो चाँदी, तुम्हें भी दुःख न होगा यदि मैं अपनी मनमानी कर लूँगी ? क्या तुम भी मुझे नहीं रोकोगी ?'

चाँदी के साँवले चेहरे पर एक क्षण के लिए कौतुहल उभरा, फिर जैसे वह अपने आपको संयत करती हुई बोली : 'रानी बीबी, मैंने तुम्हें अपनी बेटी की तरह प्यार किया है । मेरे पेट की बच्ची होती, तो भी मैं इससे बढ़कर उसका पालन-पोषण नहीं कर सकती थी, जैसा मैंने तुम्हारा किया है । तुम पढ़ी-लिखी हो, मेरी और कावेरी बिटिया की तरह तुम अनपढ़ नहीं हो ।'

मुझे हँसी आ गई ।

'कावेरी दीदी तो बी० ए० तक पढ़ी हैं ।'

'तो क्या हुआ ? वह अपने मतलब का हिसाब कापी पर लिख लेती है, मैं अपने मतलब का हिसाब अँगुलियों पर कर लेती हूँ । इतना ही तो फर्क है न ! उससे मैं उसे पढ़ी-लिखी नहीं कहूँगी । वह दिन भर बातचीत करती है, तुम उस समय मन से किताब ...नी हो । तुम किताब उस समय छोड़ती हो जब कोई विशेष काम आ पड़ता है', कुछ रुक कर चाँदी स्वयं ही कहती : 'किताब हाथ में

लिए रहने से ही कोई पढ़ा हुआ नहीं हो जाता। उसके लिए कुछ और होना जरूरी होता है।' वह 'और' आज तक मैं समझ नहीं पाई।

खैर मैं तो बड़ी उत्सुकता से इस प्रतीक्षा में थी कि देखूं कमल बाबू का क्या उत्तर होता है। तीन-चार दिन व्यतीत हो जाने पर भी समीरदत्त या चेतन में से कोई बिल लेकर नहीं आया तो मुझे जरा सा धीरज बँधा। फिर एकाएक विचार भी आया कि वे लोग तो चित्र बेच रहे हैं। चार दिन में रुपया नहीं भी मिला तो भी कुछ नहीं, उनका क्या बिगड़ता है, आखिर जिसने खरीदा है उसे तो मूल्य चुकाना ही पड़ेगा। मुझे किसी तरह कल नहीं पड़ रही थी। दीदी की सास क्या कहेगी ? बहन आई है इतना खर्च करवाने के लिए।

कमल बाबू क्या कहेंगे ?

धीरेन्द्र क्या कहेगा ?

दीदी क्या कहेगी ?

चाँदी क्या कहेगी ?

सब लोग मिल कर क्या कहेंगे ?—यही प्रश्न मेरे सामने बहुत बड़े रूप में आता। मैं अस्वस्थ हो इधर-उधर चक्कर लगाने लगती।

मैं इसी उधेड़-बुन में घर से बाहर नहीं निकलती थी। एक कमरे में उठती तो दूसरे में चली जाती। मैं सोच रही थी कि नारी के जीवन में दूसरों की राय का क्यों इतना महत्त्व है ? यह केवल मेरे साथ ही नहीं घट रहा था।

माँ को बुआ की, पिता जी की, हमारी दीदी की, यहाँ तक कि दूर के रिश्ते की ममेरी मौसी की राय की भी चिन्ता हो जाती थी। कावेरी अपने नौकर जयसिंह की राय सही बनाने के लिए पति को लेकर झूठ बोलती थी। मैं भी यदि दूसरों की राय की चिन्ता कर लूं तो कोई बड़ी बात नहीं।

मैं दीदी के आने वाले शिशु के लिए कुछ बुन रही थी कि देखा

दीदी, धीरेन्द्र और सुन्दरी बंगले की ओर चले आ रहे हैं।

मुझे ख्याल हुआ था…शायद कमल बाबू भी साथ आये होंगे। पास आने पर पता चला कि सुन्दरी अकेली थी।

वह आई तो मेरे गले से लिपट गयी।

मेरे भीतर ही भीतर जैसे कुछ सिकुड़ गया। शायद सुन्दरी की उन्मुक्त प्रसन्नता और मेरी आन्तरिक व्यथा में कहीं मेल नहीं था।

सुन्दरी ने बतलाया था कि पिछले चार दिन से वह मसूरी में ही थी, हम लोग उसे मिले ही न थे। हमारे घर का पता उसे मालूम नहीं था। मुझे आश्चर्य हुआ जब उसने कहा कि हमारे घर का पता उसे नहीं मालूम था।

'यह कैसे हो सकता है ? कमल बाबू ने तुम्हे पता भी नहीं. बँत--लाया ?' मैंने झिझकते हुए पूछा था।

'नहीं, आजकल मेरा उनके यहाँ आना-जाना कम है।'

मैं इससे अधिक कुछ न पूछ सकी। सुन्दरी कुछ दुबली और पीली लग रही थी। हमें एक दूसरे को देखे और मिले केवल एक महीना हुआ था। उस एक महीने में इतना परिवर्तन सुन्दरी जैसी लड़की के लिये कुछ असम्भव-सा लगता था।

कावेरी हम दोनों को बातचीत करते छोड़ भीतर चली गयीं।

अकेले में मैंने सुन्दरी से पूछ ही लिया कि वह मसूरी कैसे आई है ? उसने जो उत्तर दिया, उसे सुनकर मैं अचम्भे से भर उठी।

वह बोली—'रानी, मैं तुम्हारी तरह बेवकूफ नहीं हूँ। मैं अपना भला-बुरा समझती हूँ। कमल बाबू मुझे यों ही टरका देना चाहते थे। तुम जानती हो उन्होंने पिछले आठ महीने में मुझे केवल आठ सौ रुपये दिये हैं। बहुत बड़े रईसों के से ठाठ दिखलाते हैं, तो खर्च भी उनको वैसा ही करना चाहिये न। आठ महीने में कम-से-कम चार

हजार रुपया तो देने चाहिये थे। वह क्या सोचते हैं कि उनकी सूरत देखने के लिये मैं अपना धर्म बेच रही थी ? तुम दोनों बहन मेरी अपनी हो, हम साथ खेले हैं। मैं भी पत्थर-हृदय नहीं थी, मुझे भी तुम्हारा और कावेरी दीदी का ख्याल आता था कि तुम लोग मुझे कितना नीच समझती होगी ! पाप के पंक में मेरी चेतना लुप्त नहीं हुई थी। उस अवस्था से पहले ही मैंने स्वय को सम्भाल लिया। यदि उतने नीचे गिर जाती, तो कहीं की नहीं रहती।'

मैं मूर्खों की तरह भूल गई कि जब कमल बाबू के साथ इसकी बनती थी तब यह मुझे कुछ समझती ही नहीं थी। जब मुझे इसमे जलन भी होती थी परन्तु अब तो स्थिति ही दूसरी थी।

सुन्दरी को देखकर मुझे धीरज हुआ। कम-से-कम आवश्यकता पड़ने पर यह मुझे सहायता देगी, कमल बाबू ने यदि रुपया भेजने मे इन्कार कर दिया तो…।

सुन्दरी ने बतलाया कि वह एक अमीर परिवार में बच्चों की 'गवर्नेस' का काम कर रही है। वहाँ उसे सिगरेट चोरी और छिप-छिपकर नहीं पीने पड़ते, क्योंकि, घर की अन्य स्त्रियाँ भी पीती हैं। सुन्दरी ने बतलाया कि घर की मालकिन को अंग्रेजी समझ में नहीं आती। वह उत्तर प्रदेश के किसी छोटे-से जमींदार की पुत्री है। पति के साथ दो बार आठ-आठ दिन के लिये विलायत हो आई है। केश अंग्रेजी ढंग मे कटवा लिये हैं और घोड़े की सवारी भी करती है। पति और देवरों के साथ बैठकर शराब भी पीती है। सुन्दरी कहने लगी कि वह अंग्रेजी नहीं समझती कोई विशेष बात नहीं, वह दुनियाँ तो समझती है। और दुनियाँ को समझना ही उसे आना चाहिये।

मैं सोच रही थी कि सुन्दरी कितनी चतुर हो गयी है। उसकी आयु में और मेरी आयु में कोई अन्तर नहीं था, बल्कि वह मुझसे कुछ मास छोटी ही थी।

सुन्दरी ने मुझसे सिगरेट पीते हुए कहा—'रानी, अब तो मुझे भी कीमती सिगरेट पीने की लत पड़ गयी है। अब मुझे खाट पर बैठकर पढ़ना अच्छा नहीं लगता। यदि कुरसी मेज हो तो बहुत अच्छा है। कुरसी सोफे की हो तो और भी मौज है। मैं सोचती हूँ, लखनऊ के छोटे से मच्छरों से भरे मकान में मैं लौट न सकूँगी। वहाँ मेरा दम घुट जाएगा।'

मुझे अपने मकान की याद आयी। हमारा मकान इतना बुरा तो नहीं। पिता जी और माँ मुन्ने के साथ सुखपूर्वक रहते होंगे।

मेरी परीक्षा समाप्त हुए काफी दिन बीत चुके थे, फिर भी पिता जी ने मुझे घर आने के लिए नहीं लिखा। सुन्दरी स्वयं घर से आई थी। उसकी स्थिति मुझसे बिल्कुल भिन्न थी। मैं घर से जबरदस्ती बाहर की गई थी। मैं नहीं जानती, यदि मैं सुन्दरी की जगह पर होती, तो मेरा मन मुझे कोसता रहता, मैं शायद अपने को क्षमा न करती। तब तो मैं माँ और पिता जी को दोष देती। वैसे भी मनुष्य को दूसरों के मत्थे दोष मढ़ कर जितना सुख मिलता है उतना शायद अपनी स्वाभाविक विजय पर नहीं मिलता।

उस रात जब सुन्दरी अपने घर वापिस लौटी तो अनायास ही मेरा मन पक्का करती गई। मुझे लगा, वह जीवन में बिना सहारे आगे बढ़ती है, तो मैं भी क्यों न अपने पाँव पर खड़ी होऊँ? लखनऊ लौटने का अर्थ होगा कि मैं माँ और पिता जी को चिन्ता में डाल दूंगी और उनके छोटे-से परिवार में फिर तूफान उठ खड़ा होगा। सुन्दरी बेचारी का भी क्या दोष? वे छः बहनें हैं। माँ ने लाख शुक्र मनाया होगा कि उसकी बड़ी बहन उसे ले आई। सुन्दरी, सीता और सावित्री का आदर्श नहीं निभा पाई। मैंने अपने मन से ही तर्क किया कि वह बेचारी निभा कैसे पाती। उसे राम तथा सत्यवान नहीं मिले थे उसे मिले कमल बाबू। यह सतयुग नहीं कलयुग है। माता-पिता लड़की को पढ़ाते तो हैं, बड़ी आयु तक अविवाहित भी रखते हैं, परन्तु

यह शिक्षा नहीं देते कि वह कहाँ रुके, कहाँ बढ़े, अपना संतुलन कैसे बनाये रखे ?

कावेरी दीदी उस रात बात-बात पर हँस देती। उसे पता था कि सुन्दरी की कमल बाबू के साथ मित्रता है। अब जब वह उन्हें छोड़ मसूरी आ गयी है तो उसकी प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा। काँटा अपने आप दूर हो गया था।

८

मुझे सुन्दरी की खोज में वॉलनट-लॉज ढूँढना ही पड़ा। वहाँ वह नौकरी करती थी। बात यों हुई कि मेरे चित्र खरीदने के लगभग एक सप्ताह बाद मुझे कमल बाबू का एक पत्र मिला।

'प्रिय रानी,

तुमने समीरदत्त से कोई चित्र खरीदा है, पाँच सौ का बिल मैंने अदा कर दिया है। तुम पहाड़ पर गयी हो, कुछ और मन-पसन्द खरीदना चाहो, तो खरीद लेना। कावेरी को पैसों के लिए कहने की जरूरत नहीं है। तुम मुझे लिखना, मैं रुपया भिजवा दूँगा।

तुम्हारा
कमल।'

मुझे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं आ रहा था कि पत्र कमल बाबू का है। लिखावट तो उन्हीं की थी। जब दीदी हमारे पास लखनऊ आती, तो कमल प्रायः उसे पत्र लिखा करते थे। मसूरी आकर भी उनके दो-चार पत्र दीदी के नाम आ चुके थे। मैंने उलट-पुलट कर पत्र को देखा। दिल्ली की मोहर थी। पत्र पा कर मेरी

दशा बावली की सी हो रही थी। मुझे ऐसी आशा कभी नहीं थी, फिर वह भी कमल बाबू से। दीदी के विवाह को छः वर्ष हो गये थे। इन छः वर्षों में उन्होंने मुझसे सीधे मुँह बात तक न की थी। जब पत्र मिला, उस समय मूसलाधार वर्षा हो रही थी। सुबह से केप्टन धीरेन्द्र और दीदी ताश खेल रहे थे। डाक की दोनों को इन्तजार थी। जब पूरी डाक में केवल एक ही पत्र आया, वह भी कमल बाबू की लिखावट में से, कावेरी को यदि यह जानने की इच्छा हो जाये कि उसमें क्या लिखा है तो उसे दोष नहीं दिया जा सकता।

मेरे लिये दूसरा कोई रास्ता नहीं था। मुझे उन लोगों के सामने पत्र खोलना पड़ा। फिर कावेरी के माँगने से पहले ही मैंने पत्र उसकी ओर बढ़ा दिया। कावेरी ने एक साँस में पढ़ा और फिर ताश के पत्ते फेंक कर उठ गयी। मैं खिड़की से बाहर देख रही थी।

'रानी !' कावेरी चिल्लाई।

मैंने अपना मुख उस ओर किया तो उसने एड़ियों पर खड़े होकर एक तमाचा मेरे गाल पर जड़ दिया।

'कलमुँही, तू घर में रहने का यह पुरस्कार देगी मुझे। मेरे सामने तो जैसे दोनों की जुबान पर ताले लग जाते हैं। वह तुम्हारे रूप-रंग की खिल्ली उड़ाते हैं और तू भी उन्हें देख दूर हट जाती है मानो बिल्ली किसी शुभ काम में रास्ता काट गयी हो। क्या ये ढकोंसले केवल मुझे दिखलाने भर को थे। बोल, तू बोलती क्यों नहीं? तेरी पढ़ाई गई चूल्हे में। यह प्रेम-व्यापार चलाने के लिये तुझे दूसरा कोई नहीं मिला था ?'

मेरे गाल पर थप्पड़ पड़ना और दीदी का लेक्चर सब पलक झपकते हो गया था।

दीदी का चिल्लाना सुनकर चाँदी भी आ गयी। उसने हाँफती हुई कावेरी की पीठ सहलाई, 'बिटिया, यह तू क्या कर रही है। तेरे

लिए इतना क्रोध अच्छा नहीं। तू आराम कर। रानी बिटिया ऐसी नहीं है, तुझे ऐसे ही सन्देह हो गया होगा।'

कावेरी क्रोध से पागल हो रही थी। आज इतने वर्षों बाद भी उस घटना को सोचती हूँ तो रोमांच हो आता है। तब मेरी आयु केवल इक्कीस वर्ष की थी। जरा-सी उपेक्षा से लगता था कि मेरा अपमान हो गया। हीन भावना से मैं पहले से ही त्रसित थी। दीदी के थप्पड़ से तो जैसे मेरा खून ही खौल गया।

चाँदी की बात पर दीदी को और भी क्रोध आया। उसने चाँदी को भी एक थप्पड़ मारा—'तू भी इसके साथ मिली है। मैं जानती हूँ इसकी इतनी हिम्मत नहीं हो सकती, यदि इसे तेरा सहारा न होता। तुम दोनों मेरे घर से निकलो, जहाँ चाहो जाओ। मैं रुपया खर्च कर सकती हूँ, मेरे लिये नौकरानियों की कोई कमी नहीं।'

केप्टन धीरेन्द्र ने सन्देहपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखा। उस घर के टुकड़ों पर जीने वाला! भला उसमें इतना साहस. कहाँ था कि वह दीदी की बात का खंडन करता।

कावेरी पाँच सौ रुपयों के लिए जो वह एक बार बाजार जाने में खर्च कर देती थी, मुझसे लड़ रही थी। मुझे घर से निकाल रही थी। मुझे बाद में ऐसा, लगा, जैसे दीदी ने सुन्दरी का भी सारा क्रोध मुझ पर उतारा था।

मैं दीदी से काफी लम्बी थी। वह ठिगनी थी और इस समय गर्भवती होने से कुछ स्थूल भी हो गयी थीं, तिस पर पैरों पर खड़ी होकर उसने थप्पड़ मारे थे। चाँदी को हमारे घर में आये बाईस वर्ष हो चुके थे। बचपन में तो हमने जितना चाहा उसे तंग किया, वह तो सुहाता भी था, परन्तु इस बूढ़ी अवस्था में झूठे आरोप लगा कर मारने का अधिकार हमें न था। मुझे चाँदी ने माँ की तरह पाला था, उसे मारना मुझे ऐसे लगा जैसे कावेरी ने मेरी माँ के मुंह पर मारा हो। कावेरी के हाथ के गोखरू में बने हाथी के मुख की सूंड चाँदी की

कनपटी पर लग गयी। उससे दो-तीन बूंद रक्त भी टपका।

वर्षों से मेरे हृदय में दबा विद्रोह मानो एकदम फूट पड़ा। मैंने गरज कर कहा—'अपने पति को संभाल कर डिबिया में बन्द कर रखो, दीदी, वह तुम्हारे इतना सुन्दर होने पर भी दूसरी स्त्रियों के पीछे भागता फिरता है। तुम अपना पैसा अपने पास रखो। जो तुम्हारे पैसे पर नहीं जीते, वे क्या इस संसार में रहते नहीं? हम दोनों शाम तक घर खाली कर देंगी।'

मैं चाँदी का हाथ पकड़ कर अपने कमरे में ले गयी। रक्त पोंछा, उस पर स्प्रिट लगाई और उसे अपने कमरे में बैठने के लिये विवश कर दिया।

चाँदी मूक थी, उसकी आँखों से अविरल आँसू बह रहे थे।

दीदी बाहर के कमरे में ऊँचे स्वर में बोल रही थी। वर्षा में बहने वाले नदी-नालों के स्वर में मुझे उनकी बात पूरी तरह तो समझ में आ नहीं रही थी। जो कुछ भी समझ में आया, उसका आशय केवल इतना था कि मैं अपने को बहुत बड़ा समझने लगी थी। मुझे दीदी को धौंस दिखलाने की कोई आवश्यकता नहीं थी। वह देख लेगी कि मुझे उनका घर छोड़ कर कहाँ ठौर मिलता है! माँ को भी वह पत्र लिखने वाली थी कि वह अपनी लाडली बेटी की करतूत देख लें।

उसी मूसलाधार वर्षा में, मैं बॉलनट लॉज ढूंढने निकल पड़ी। सुन्दरी से उसका ठीक पता पूछना मैं भूल गयी थी।

दु:ख में मनुष्य की बुद्धि भी साथ नहीं देती। इतने बड़े रईस हैं, उनके घर में टेलीफोन का होना अनिवार्य है, ऐसा मुझे उस समय नहीं सूझा। मूसलाधार वर्षा में हल्की-सी बरसाती पहन कर मैंने दो-तीन मील का सफर तय कर डाला। एक स्कूल से पता चला कि वालनट लॉज कहाँ है। वह हमारे घर से आध मील दूर भी नहीं होगा।

सुन्दरी मुझे वर्षा में भीगते देख परेशान हुई। 'वॉलनट लॉज'

वहुत बड़ा बंगला नही था, यही छ: कमरे की कॉटेज थी जिसके साथ तीन कमरे मेहमानों के लिए जुड़े हुए, 'बंगले से हटकर बांई ओर अखरोट के वृक्षों के साथ थे, उन्ही में से एक कमरे में सुन्दरी रहती थी। सुन्दरी को मैंने पूरी बात सुनाई तो वह बोली, "कावेरी का चिल्लाना आज नहीं तो कुछ दिनों के बाद अवश्य ही होता, क्योंकि इस पत्र से साफ जाहिर है कि कमल बाबू तुममें दिलचस्पी लेने लगे हैं। पत्नी की बहन का यह अधिकार नही कि वह उसके सामने यह सब खेल रचे। तुम्हारे लिए वह घर छोड़ देना ही श्रेयस्कर है, फिर तुम एम० ए० पास तो हो ही जाओगी।"

मेरे यह कहने पर कि मैं कहाँ जाऊँ ? क्या करूँ ? सुन्दरी ने कहा—"एक नाटक रचना होगा। मैं कहूँगी, तुम विना इत्तला दिये दिल्ली से चली आई इसलिए मैं तुम्हारे लिए कहीं विशेष रूप से रहने का प्रबन्ध नही कर पाई। अब परदेश में मैं तुम्हें कहाँ जाने दू। इस लिये मैं अपने मालिकों से कहती हूँ कि वह तुम्हारे यहाँ रहने में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित न करें।"

सुन्दरी अपने मालिक से पूछने गई, तो मैंने उन सभी देवी-देवताओं को याद कर लिया जिनके नाम मैंने जाने-अनजाने माँ से या बुआ से सुने थे। मैंने मन-ही-मन प्रत्येक देवी-देवता का चढ़ावा देने की प्रतिज्ञा की। यहां सुन्दरी के पास रहने को स्थान मिल जाये, तो मैं देख लूगी कि आगे चलकर क्या होता है। चाँदी के लिए भी मैने सुन्दरी से कह दिया था। थोड़ी देर बाद मैं सुन्दरी के साथ उसके मालिक के कमरे में गयी। सुन्दरी ने मेरा परिचय दिया—"रानी मेरी सखी, सरस्वती का साक्षात् अवतार है। सितार इतना वढिया बजाती है। हिन्दी, संस्कृत में एम० ए० किया है। हमेशा फर्स्ट क्लास फर्स्ट। दिल्ली के कमल वावू की साली है। इसे पता था कि मैं आप लोगों के साथ रहती हूं, यह बिना सूचना दिए ही चली आई है। इसकी

नौकरानी भी साथ है। यह किसी भी बड़े-से-बड़े होटल में ठहर सकती है, परन्तु मैंने इससे अनुरोध किया है कि यह हमारे यहाँ ही रहे, क्योंकि यह प्राण बाबू की नाटक-मण्डली में काम कर सकेगी। इसका उच्चारण भी बड़ा शुद्ध है, फिर यह शकुन्तला का अभिनय करने के लिए बहुत ही उपयुक्त है। इसके केश तो देखिये कितने लम्बे हैं !"

मेरा ढीला-सा जूड़ा तुरन्त सुन्दरी ने खोल दिया। बालों का प्रदर्शन मुझे बहुत अटपटा लगा। भला यह भी कोई बात है! धीरे से उसने मेरे कान में कह दिया—"चुप रह ना, नाटक कर रही हूँ।"

मेरा मन कह रहा था—इस सबसे तो अच्छा था कि मैं बाहर वर्षा में भीगती रहूँ। मुझे सुन्दरी पर बहुत क्रोध आया।

उसके मालिक चालीस और पचास के बीच में होंगे। उनकी सही आयु का उस समय मुझे अनुमान नहीं हुआ। वह सिगार पी रहे थे और कुर्सी पर बैठे थे। एकाएक उठ खड़े हुए।

"अरे मिस शर्मा, यह क्या कर रही हो? मिस रानी आपकी सखी हैं, तो हमारी महमान हैं। आप राधा से जाकर कह दीजिये कि वह आपके सामने वाला कमरा मिस रानी के लिए खाली करवा दें। इनकी नौकरानी अपनी आया के क्वार्टर में रहेगी।"

मेरे कपड़ों से पानी चू रहा था। श्री टण्डन ने कहा कि वह अड्डे पर फोन कर देते हैं, हमारा सामान घर पर मँगवा लेंगे।

सुन्दरी उसका भी उत्तर सोचकर आई थी, तुरन्त बोली—'आप तकलीफ न कीजिए। यह शायद किसी होटल में सामान रखवा कर आई हैं। अभी वहाँ जाकर ले आयेंगी, नहीं तो इनकी नौकरानी समझेगी ही नहीं कि उसे क्या करना है।'

टण्डन साहब ने मुझे ऊपर से नीचे तक देखा। शायद वह कुछ तौल रहे थे।

चाँदी को और मुझे टण्डन परिवार में अभी एक ही सप्ताह

हुआ था कि मालिक दिल्ली चले गये।

मैं जब चाँदी को और सामान लेने दीदी के घर गयी थी, तो वह अपने कमरे में बैठी बड़बड़ाती रही और एक बार भी बाहर मुझसे मिलने नहीं आई। मेरा सामान जब कुली लेकर बाहर चला गया, तो मैंने सोचा कि एक बार दीदी से कह आऊं कि हम लोग जा रहे है। चाँदी मना ही करती रही, परन्तु मैं दीदी के कमरे में चली गयी।

'दीदी हम लोग जा रहे है।'

वह दीवार की ओर ही देखती रही, शायद उसे विश्वास ही नहीं था कि हम लोग चले भी जा सकते हैं।

वॉलनट-लॉज में मुझे सुन्दरी की बगल वाला कमरा मिला। कमरा अच्छा खुला था, मेरी खाट बिछी रहने पर भी एक दीवान बना लेने की जगह थी। मैंने अपने दो बक्स जोड़ कर बैठने की जगह बना ली। उन लोगों से अधिक फर्नीचर मांगना तो बुरा लगता। सितार मैंने बक्स से बाहर निकाल लिया।

मालकिन से मेरा परिचय कराया गया। सुलोचना देवी की आयु तीस वर्ष से ऊपर ही होगी। वह गोरे रंग की, छोटे कद की सुन्दरी-सी, दुनियादारी में दक्ष स्त्री थी। उसे देखते ही मुझे पता चल गया कि श्रीमान की तरह इन श्रीमती जी को झूठ बोल कर कुछ उल्टा-सीधा सुझाया नही जा सकता।

सुलोचना देवी से दो दिन बातचीत करने के बाद मैंने तय कर लिया कि मैं अपने लिए भोजन चांदी से बनवाऊँगी और अब टण्डन परिवार में खाना नहीं खाऊँगी। उन्होने भोजन के बारे में मुझसे किसी प्रकार की बातचीत नही की थी हालांकि भोजन के समय, सुबह नाश्ते के समय वह मुझे बुलवा भेजती थी। मैं जब भोजन की मेज पर पहुँचती, तो वह बहुत ही स्नेहपूर्ण व्यवहार करती। एक स्वाभाविक मुस्कान सुलोचना देवी के मुख पर विराजती, परन्तु ऊपर वाला होंठ

कुछ ऐसा दबता कि उससे स्पष्ट हो जाता कि वह कहीं दुःखी हैं, या उन्हें किसी बात की चिन्ता है, जिसे वह व्यक्त नहीं कर पा रहीं। मेरी इच्छा कभी भी यह नहीं थी कि मैं उनकी चिन्ताओं को और बढ़ाती। सुन्दरी उनके बच्चों को पढ़ाती थी, उनके वेतन पर रहती थी, स्वाभाविक था कि वह उसे भोजन देते। मुझे भोजन देना उनके लिए आवश्यक नहीं था। मुझे तीन-चार दिन में ही पता चल गया कि घर की आर्थिक स्थिति उतनी सम्पन्न नहीं है, जितनी वे लोग दिखलाते हैं। मुझे तो इस बात पर प्रसन्नता ही थी कि सुन्दरी को इनके घर में काम मिला हुआ था। गवर्नेस रखने की इन लोगों की हैसियत नहीं थी। अपनी पुरानी शान पर, जिसके खण्डहर हो चुके थे, अब ये नए महल खड़े किए जा रहे थे, जिसकी सामर्थ्य उनमें नहीं थी।

मसूरी में एक तो अच्छा दूध वैसे ही कम मिलता है, दूसरे टण्डन परिवार में जो दूध आता, उसमें और पानी मिला होता। घर की मालकिन सुलोचना देवी की पुरानी साड़ियों पर नये रंग करवाये गए थे। उनके आभूषणों की अवस्था भी अच्छी नहीं थी। किसी का कोई नग नहीं था, तो दूसरा इतना घिस गया था कि पता चलता था कि वह दस वर्षों से उसे इस्तेमाल कर रही हैं।

दूध में पानी मिलाया जाता, नौकरों को पेट भर भोजन नहीं मिलता, यह मुझे चांदी ने बतलाया। चांदी ने यह भी बताया कि नौकरों को जो चाय दी जाती है, उसमें दूध नाम-मात्र को नहीं होता। सुलोचना देवी के चार बच्चे थे जिनमें बड़ा स्कूल कि बोर्डिंग में [illegible] था—जो [illegible] महीने में आता। छोटी तीनों [illegible]

कमाने वाले थे। मंझला देवर वकालत पास करके नाट्यकला के पीछे दीवाना था। वह कोई काम नही करता था। अपने पिता तथा भाई के नाम पर लोगों से रुपया ऐंठता रहता था। मैंने सुना कि दिल्ली में वह एक नाटक का निर्देशन करके आया था, जिसे लोगों ने पसन्द किया था और उसके टिकट खूब विके थे। जो रुपया वना, उससे वह और उसके साथ काम करने वाले दूसरे लोग एक सप्ताह बम्बई का चक्कर लगा आये थे। फिल्मों में क्या कुछ होता है, यही देखने के लिए।

तव वह उन गर्मियों में मसूरी में, कालिदास की अमर कृति शकुन्तला का नाट्य-रूपान्तर प्रस्तुत करना चाहता था जिसमें मुझे शकुन्तला का अभिनय करने के लिए एक परीक्षण देना था।

घर में ननद भी थी। एक तो सुलोचना देवी की आयु की होगी, उसने मैट्रिक के बाद आगे पढ़ना उचित नहीं समझा था। उसका विवाह भी अभी योग्य वर के न मिलने के कारण न हुआ था। दिन भर वह अपने पिता के धन का गुणगान करती और सुलोचना देवी के हर काम में छिद्रान्वेषण किया करती।

सुनन्दा देवी हर समय इस तरह सजी रहती, जैसे अभी किसी विज्ञापन के लिए फोटो उतरवा कर आई हो। मुझे तीन-चार दिन रहने से इस बात का पता चल गया कि सुलोचना देवी को अपनी ननद सुनन्दा की उतरन भी पहननी पड़ती है। सुनन्दा की छोटी बहन—बीस-बाईस वर्षीय 'बेबी'—इसी नाम से उसे पुकारा जाता था, स्कूल मे पढ़ी ही नही थी। उसने कोई परीक्षा पास नही की थी। हिन्दी, फ्रेंच और अंग्रेजी का उसे कामचलाऊ ज्ञान था। 'बेबी' का वास्तविक नाम क्या था, मैं आज तक नहीं जान सकी।

बेबी सिगरेट पीती, घुड़सवारी करती, भतीजियों के बाल खीचती। और उनके साथ बच्ची बनकर इधर-उधर घूमती रहती। न तो

का कोई प्राणी उसे ऐसा करने से मना करता और न वह सोचती ही कि वैसा करने में कोई बुराई थी। शायद इसलिए कि बड़ी बहन का अभी विवाह नहीं हुआ था।

घर के मालिक, सुलोचना देवी के पति, अपनी छुट्टी पूरी करके दिल्ली लौट गये। जब वह घर में रहते थे, तो उनकी आवाज़ कम ही सुनाई देती थी। किसी को कुछ भी ऊँच-नीच वह न कहते, फिर भी पूरे घर पर एक अज्ञात भय छाया रहता और सभी उनको आदर की दृष्टि से देखते थे।

सुनन्दा भी बड़े भाई से दबती थी। वह घर में होते तो उसकी जबान बन्द रहती। भाभी को भी कम डांटती और पिता के धन का गुणगान भी कम करती। सुलोचना देवी सुनन्दा से एक और बात में भी दबती, वह उतना पढ़ी-लिखी नहीं थी जितनी सुनन्दा। घर की स्त्रियों में सिवाय सुनन्दा के और किसी ने स्कूल देखा ही नहीं था। नौकर-चाकर सुलोचना देवी से पूछते कि भोजन के लिए क्या-क्या बनेगा तो वह अक्सर राय देतीं कि सुनन्दा से भी पूछ लिया जाय। सुनन्दा स्वयं कहती कि वह मैट्रिक में पढ़ती थी, जब बड़े भैया का विवाह हुआ था। उस घटना को हुए भी पन्द्रह वर्ष हो चुके थे। फिर भी सुनन्दा की रुचि का सुलोचना को ज्ञान नहीं क्योंकि ननद ने यह निश्चय किया था कि वह भाभी के बनाए भोजन में अवश्य त्रुटि निकालेगी। भाभी बड़े घर की लड़की है तो क्या उन्हें स्वतन्त्रता दी जाए कि वह ननद से बिना पूछे—अपनी मनमानी कर ले? सुनन्दा की माँ यदि जीवित होतीं, तो शायद उनका भी शासन इतना कठोर न होता। सुनन्दा का कहना था कि बड़े घर की लड़की को शासन करना आना चाहिए। फिर ससुराल में नहीं तो कम से कम पिता के ... पे स्त्री का शासन होना ही चाहिए।

घर के मालिक दिल्ली चले गए, तो मुझे लगा कि अब समय है

कि मैं कमल बाबू को पत्र लिखूं। हो सकता है कि वह उनसे मिलें तो···मेरी परिस्थिति कैसी होगी। मुझे कम से कम अपनी सफाई तो देनी चाहिए।

इस विचार मात्र से मेरे हृदय की गति बढ़ गयी। मैं उन कमल बाबू को पत्र लिखने की सोच रही थी, जो मुझसे घृणा करते, मेरी त्वचा से घृणा करते, जिन्होंने मेरे साथ बातचीत करना बुरा समझा। ऐसे कमल बाबू को मैं पत्र लिखूं ? उनके उस पत्र का उत्तर भी तो देना था, धन्यवाद भी तो देना था।

मैंने साहस बटोर कर पत्र लिखने का उपक्रम किया, तो सुन्दरी तीनों बच्चों को मेरे पास छोड़ गई। वह कहीं बाहर घूमने जाना चाहती थी। मुझे पता था कि यह घूमना सिवाय प्राण बाबू के और किसी के साथ नहीं हो सकता।

उस समय भी मैं पत्र न लिख सकी। बच्चियों के साथ खेलना पड़ा। फिर उन्हें नाश्ता खिलाया और बंगले में इधर-उधर ही उन्हें घुमाने लगी। मैंने मन में कई बार सोचा कि मैं कमल बाबू को पत्र आरम्भ कैसे करूँगी ? जीजा सम्बोधन तो कभी मैंने किया ही न था, मौका भी नहीं आया था। अब जीजा कहना तो कठिन होगा, मुझे वहां मंसूरी में बैठे ही उस बात को सोचकर ही लाज आती।

रात को लिखने बैठी तो बंगले के भीतर से सुलोचना देवी का बुलावा आ गया कि मैं बच्चियों को कहानी सुना दूं। वह मुझे याद कर रही थी। सुन्दरी शायद उन को इधर-उधर की बात कर के बहला देती थी, कभी विशेष दिलचस्पी लेकर उसने ध्यान नहीं दिया था। मेरे जरा से ध्यान देने से वह प्रभावित हो चुकी थीं और बार-बार मुझे बुलाती थी। सबसे छोटी लडकी मधु को देखती तो मुझे मुन्ने की याद आ जाती, वह भी दो वर्ष का हो चुका था। वह भी इसी तरह तुतला-तुतला कर मीठी-मीठी बातें करता होगा, जो माँ

के कानों में अमृत वर्षा करती होंगी ।

भोजन के बाद मैंने सोचा अब पत्र लिखूं। उस समय सुलोचना देवी मेरे पास आ बैठीं। पहला ही अवसर था कि वह मेरे कमरे में आई थीं। उन के साथ बातचीत तो बहुत बार हो चुकी थी, परन्तु उनके ही कमरे में।

उनका अनायास आ जाना मुझे चकित कर रहा था। उनके पति को दिल्ली गए केवल दो ही दिन हुए थे, शायद इसलिए वह मेरे पास आ बैठी थी। वह दुखी है, यह मैं उनके घर पहुँचते ही समझ गयी थी। वह मुख से कुछ बोली नहीं थी। दुखियों की एक अपनी मौन भाषा होती है जिसे चुप रहने पर भी वे एक दूसरे को इसका आभास देते हैं, फिर दोनों ही समझ जाते हैं कि दूसरे व्यक्ति को कोई दु:ख है। सुलोचना देवी के आते ही मैं भी समझ गई कि वह किसी विशेष कारण से आई है।

"रानी बहन, तुम इतने बड़े घर की लड़की हो, फिर भी तुमने मेरी बच्चियों को कितना प्यार दिया। मैं तो देख-देख कर हैरान हो रही थी।"

फिर किसी अन्तर्वेदना से सुलोचना देवी की आँखें सजल हो गईं। मुझे लगा कि उनके हृदय पर दु:ख का इतना बड़ा पत्थर-बोझ है। उसे उठाने में मेरी सहायता से सम्भवत: कुछ हो सके तो इससे अच्छी बात उस समय मैं कौन-सी कर सकती थी? मुझे उनके पति ने आश्रय दिया था, अपनी सगी बहन ने मूसलाधार वर्षा में घर से बाहर निकाल दिया था। जाने उसे रुपये का इतना नशा क्यों था? शायद उन सभी लोगों में होता है जिन्होंने धन जीवन में पहली बार देखा हो।

सुलोचना देवी रात देर तक मुझसे बातचीत करती रहीं। जब वह उठकर गयी, तो रात्रि के दो बज चुके थे। सुन्दरी तब तक बाहर

से लौटी न थी। जैसा कि मेरा अनुमान था सुलोचना देवी अपनी ननदों से बहुत त्रसित थी। सुनन्दा का शासन बहुत कड़ा था। सुनन्दा की माँ की मृत्यु हुए चार वर्ष हो चुके थे। जब वह जीवित थीं, तभी से सुनन्दा का शासन चलता था। सुलोचना देवी को बच्चे विवाह के दो वर्ष बाद ही होना शुरू हो गए थे, और वह उनके पालन-पोषण में लग गयी।

घर में जैसा उनके साथ व्यवहार होता गया, वह सहती गयी। एक बार भी पति से या घर के और किसी प्राणी से उसकी चर्चा नहीं की। घर के मालिक भी सोचते कि उनकी बहन साक्षात् देवी का अवतार है, उस जैसा दूसरा कोई नहीं। बच्चों को साथ लेकर वह बहुत लम्बी अवधि के लिए मैके चली जाती परन्तु इधर माँ की मृत्यु हो जाने से वह मायके भी नही जा पायी थीं। भाभियों के सिर पर जाकर महीनों कैसे पड़ी रहें? सुनन्दा देवी का अपने ऊपर खर्च करने में हाथ बहुत खुला था और प्राण बाबू को भी वह खुले हाथों रुपया देती।

'बेबी' अभी छोटी ही थी, बहन-भाइयों में सबसे छोटी। स्वाभाविक ही था कि उसकी हर माँग को पूरा किया जाता। सुलोचना देवी यदि कभी भूले से भी यह सलाह दे देतीं कि सुनन्दा जरा सोचकर खर्च करें, तो वह नाराज हो कर कह देतीं—'भाभी, तुम जो कंजूसी अपने घर में देख आई हो, वह यहाँ पर भी करना चाहती हो! यही तो हमारे खेलने-खाने के दिन है। फिर कब खर्च करेंगी?'

सुलोचना देवी ने सब नियन्त्रण अपने पर ही लगा लिए थे। वह अपनी इच्छाओं का दमन करती, जहां तक होता कोई खर्च न करती।

सुलोचना देवी को देखा जाए तो जीवन में कोई अभाव नहीं था। पति अच्छे थे, जो आधुनिकता पसन्द करते थे और पत्नी आधुनिक नहीं मिली, इसका उन्हें अफसोस था और सुनन्दा देवी ने अपने

को उनके घर के रंग में रंगने की बड़ी कोशिश की थी, जिसमें उन्हें सफलता भी मिली थी। उनका आधुनिकता का रंग वैसा ही था, जैसे चाँदी के आभूषणों पर सोने का पानी फेरा जाय तो कुछ महीने के व्यवहार के बाद चाँदी दिखाई देने लगती है। उनकी प्रत्येक क्रियाओं से पता चलता था कि उसमें कृत्रिमता है। वह सब स्वाभाविक नहीं है वह सिगरेट भी पकडती तो उनके हाथ वैसे अभ्यस्त न लगते जैसे सुन्दरी और बेबी के। जबरदस्ती हमेशा चेहरे पर मुस्कान रखने के लिए भी जो प्रयत्न वह करती उसका खोखलापन भी जल्दी ही दूसरे व्यक्ति को पता चल जाता क्योंकि उस मुस्कान में कृत्रिमता इतनी अधिक होती। मैं सोचने लगी कि सभी सम्पन्न परिवारो का यह हाल है। हमारे माता-पिता छोटी स्थिति के है परन्तु शायद उन्हे इस आडम्बर की आवश्यकता नही इसलिए वह इन सबसे अधिक प्रसन्न है, और सुखी हैं। शायद आधी शान्ति तो यह आधुनिकता ही ले जाती होगी। देखा-देखी अपने स्तर के परिवारों में अपना सम्मान और स्थान बनाये रखने के लिए इन्हें बहुत कुछ करना पड़ता है। टण्डन परिवार जैसी स्थिति कई दूसरे परिवारों की होगी। जहाँ आवश्यकताएँ तो बढ़ जाती है. आय का कोई साधन नही बढता। घर का कोई भी प्राणी उस आय को बढ़ाने में सहायता नहीं देता। सभी अपने शौक पूरे करना चाहते है। जिसका शौक पूरा न हो, वही घर वालो को कोसता है, बुरा-भला कहता है। बीसवी सदी विज्ञान की सदी है। मानव की सुख-सुविधा के लिए विज्ञान ने सब कुछ किया है परन्तु मनुष्य ने जो अपनी आवश्यकताओं को इतना बढ़ा लिया है, उसमे विज्ञान का कोई हाथ हो, मैं नहीं सोच पाई। मैं देर तक सोचती रही परन्तु किसी भी तरह मैं विज्ञान को दोष नही दे सकी। शायद हम लोगों ने विदेशी सभ्यता अपनाई थी, परन्तु उससे सम्बद्ध सूक्ष्मता तथा दूर-दर्शिता नही अपना पाए थे।

सुन्दरी साड़िया अधिक खरीदती थी, चाहे वह उन्हें पहन सकती थी या नही पहन सकती थी। जैसा कि मेरा विचार था अधिकतर वे अलमारियों की शोभा बढ़ाती थी। वह सिगरेट पीती, कीमती दूकान से केश सवरवाती। हर दूसरे महीने उसकी केश-सज्जा पर पैंतीस-चालीस का खर्च बैठता। हाथ से सुनन्दा इतना काम न करती कि भाई को या परिवार को बीस रुपये का भी लाभ हो जाए। विदेशी स्त्रियां यदि केश-सज्जा पर चालीस खर्च करती है तो अन्य बीस काम वे ऐसे करती है जिनमें रुपए अपने शृगार के लिए बचा ले। मैं इसी आवर्तन-विवर्तन में बहुत देर तक जागती रही। जब सोई तो शायद दिन निकलने वाला था।

१०

सुलोचना देवी की समस्याओं से तथा अपने झंझटो से छुटकारा पाकर मैंने जीवन में प्रथम बार कमल बाबू को पत्र लिखा। यह पत्र मैं बहुत देर तक सोचती रही कि आरम्भ कैसे करूँ? सम्बोधन क्या दूँ? जब से दीदी का विवाह हुआ था, मैंने कभी कमल बाबू से प्रत्यक्ष बात भी नही की थी। यह पत्र लिखना भी मेरे लिए सकट बना हुआ था। उस पत्र मे मैंने क्या लिखा मुझे आज तक याद है।

'कमल जी,

आपका कृपा-पत्र मिल गया था, उसके लिए आभारी हूँ। आपने उस चित्र का मुल्य चुका कर सचमुच में मुझ पर बड़ा अनुग्रह किया। आप यदि उसका मूल्य न चुकाते, तो मुझे बहुत से लोगो के सामने

लज्जित होना पड़ता। कावेरी ने शायद उसके बाद की घटना आपको लिखी हो। परन्तु नहीं जानती, उसने किस रूप में मेरा दोष प्रस्तुत किया।

आपका पत्र देखते ही वह तिलमिला गई थी। उसे सन्देह हो गया था कि मेरा"'आपसे कुछ अनुचित "सम्बन्ध है और दीदी को दिखलाने भर के लिये हम उसके सामने परस्पर नही बोलते रहे है।

उस दिन बड़ी भयंकर वर्षा हो रही थी। चाँदी ने मेरा पक्ष लिया तो दीदी उससे भी नाराज़ हो गयीं और उसे एक थप्पड़ जड़ दिया। हम लोगों को उन्होंने घर से निकल जाने की आज्ञा दी। अब इसके बाद तो हमारा धर्म नहीं रह जाता था कि उस घर में रहती।

मैं सचमुच मे आप लोगों की बड़ी आभारी हूँ। दीदी की भी कृतज्ञ हूँ। यदि वह उस दिन क्रोध में आकर घर से बाहर न करती तो मेरी स्थिति अभी भी वैसी रहती—निरुद्देश्य दूसरों पर भार बनी। अभी तो मुझे कोई नौकरी नहीं मिली है, परन्तु मेरी कोशिश जारी है। संगीत सिखलाने का काम शायद मिल जाए।

मैं बॉलनट-लॉज में एक परिवार के साथ रहती हूँ, जहाँ मेरी सखी सुन्दरी गवर्नेस का काम करती है। मेरे आ जाने से सुन्दरी को सुविधा हो गई है। वह बच्चे मेरे पास छोड़ घूमने-फिरने चली जाती है।

जो कुछ मैंने आपको लिखा है उसका अक्षर-अक्षर सत्य है, कोई अतिशयोक्ति नही। मैं आप लोगों के एहसान भूल नही सकती। पिता जी और माँ को मैंने पत्र नहीं लिखा। उन्होंने भी तो इधर छः महीने से मुझे कोई पत्र नही लिखा। आप उचित समझें तो उन्हें पत्र लिखें या जब मिलें समझा दीजिएगा।

—रानी।'

यह पत्र मैंने बार-बार पढा, न तो नीचे कुछ लिख सकी और न

ऊपर ही। बस ऐसे ही पत्र लिया और स्वयं डाकखाने में डालने के लिए गई। टण्डन परिवार में आये हुए मुझे लगभग दस-बारह दिन हो गये थे, परन्तु मैं कहीं बाहर न निकली थी। सुन्दरी के बहुत कहने पर भी मैं घूमने नहीं गई थी। धड़कते हृदय से पत्र मैंने डाक में छोड़ दिया। उसके बाद ऐसा लगा मानो बहुत बड़ा भार जो मेरे सिर पर रक्खा था, मैंने उतार फेंका।

मैं अपनी मनः-स्थिति पर स्वयं हैरान थी। मुझे इस बात का दुःख बहुत कम था कि घर से मेरा नाता टूट गया था। माँ ने किस चातुर्य से मुझे घर से निकाला था यह बड़े कौतुक की बात थी। डाकखाने से घर लौटते समय यदि मुझे आश्चर्य था, तो केवल इस बात का कि क्या दूसरी माताएँ भी ऐसी होती है? क्या उन्हें भी अपनी सन्तान से कोई मोह नहीं होता? दीदी ने अपनी पहली सन्तान किस आसानी से माँ को दे दी थी। मैं निश्चल, जड़-सी वॉलनट-लाज पहुँच गयी।

सुलोचना देवी बेचैनी से मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। मेरे घर पहुँचते ही उन्होंने पूछा कि मैंने सुन्दरी को कहीं देखा है? मेरे न कहने पर वह और भी चिन्तित हो उठी, आशंका से भर उठीं। प्राण बाबू के साथ उसका उठना-बैठना बड़ी स्वतन्त्रता से हो रहा था… शायद उसी के साथ चली गयी है। मैंने अपने मन की बात मन में ही रखी। सुलोचना देवी मानो मुझे पुस्तक की तरह पढ़ गयी।

'सुन्दरी और प्राण बाबू इकट्ठे भी जा सकते है, क्यों?'

मैंने बहुत झिझकते हुए, आत्मग्लानि से पीड़ित होकर उत्तर दिया, 'हाँ।'

'जब से वह दिल्ली गये हैं, मैं इन दोनों में बड़ी घनिष्ठता देख रही थी। मुझे लगता था, एक दिन यह जरूर होगा। रानी जी, वह आपकी सखी है, यह कुछ समझ में नहीं आया।'

मुझे उस समय कुछ सूझा नहीं, चाहे मैं बहुत कुछ कहना चाहती थी। सखी के विषय को न लेकर मैंने तुरन्त कहा था: 'कोई काम हो तो मैं भी करने को तैयार हूँ।'

सुलोचना देवी ने मेरी ओर ध्यान से देखा, फिर कहा: 'आप यह क्यों कहती है? मुझे इतना छोटा न समझें। आप की सखी चली गयी है इसका यह अर्थ कही नही निकलता कि बच्चियों की देखभाल आप करें। यह मैं भी कर लूँगी।'

उस समय जाने कहाँ से दुनियाँ भर की नम्रता मेरी जबान पर आ गई।

'नही जीजी, आप गलत न समझें। मैं आपको नीचा नहीं दिखला रही'। मैं तो मानवता के नाते कह रही हूँ कि मैं भी बच्चियों की देखभाल मे आपका हाथ बटा सकती हूँ।'

सुलोचना देवी ने इतनी आत्मीयता के शब्द शायद कभी सुने नही थे, वह पसीज उठी।

उस दिन से बच्चियों की देखभाल मैं करने लगी। सुन्दरी का कोई पत्र नही आया। उस कमरे में, सिवाय उस फर्नीचर के जो सुलोचना देवी का दिया हुआ था, उसका अपना कुछ भी नहीं था। वह जाने कब अपने कपड़ों का सूटकेस ले गयी थी। यहाँ तक कि उसका तेल, साबुन भी वहाँ नही था।

मैंने जीवन मे कभी यह नही सोचा था कि मैं किसी की बच्चियों की देखभाल करूँगी। चाँदी इस सारे काम मे बड़ी चतुर थी। वह बच्चियों को स्नान करवाती, बाल संवारती और घुमाने ले जाती। मैं अपना खाना बनाती, कमरा साफ करती और बच्चियों को संगीत सिखलाती।

सुनन्दा देवी सज-धज कर कभी-कभी खिड़की के पास बैठी होती, मे कोई अधखुली विदेशी पत्रिका रहती, नही तो किसी निर्धन

रिश्तेदार का पत्र रहता, जिसने रुपया माँगा होता। मुझे लगता था कि सुनन्दा देवी उसी क्षण-विशेष का लाभ देखती है और तुरन्त प्रभावित हो कर कुछ कर डालती है। उन्हें भविष्य की चिन्ता नहीं रहती। वह सोचती कि संसार मे कुछ शेष नही रह गया जो उन्हें सीखना है, यह सर्व-गुण सम्पन्न है। मैं सोचने लगी कि कानून के हाथ भी यह कभी पड़ गई तो···यह मानेगी ? शायद नही।

जिस दिन से सुन्दरी और प्राण बाबू गए थे, सुनन्दा देवी सुन्दरी को दोष देने लगीं—"वही मेरे भाई को भगाकर ले गई है, नही तो वह ऐसा न था। जो लड़किया दूसरे घरों मे नौकरी करने निकलती है, उनसे और क्या आशा की जा सकती है।"

परोक्ष में चोट मुझ पर भी होती थी। सुनन्दा को देख कर मुझे लगता था कि इन धनी स्त्रियो का जीवन कितना व्यर्थ है। न कोई काम, न कोई धन्धा, बस दिन भर गप्प लड़ाना और श्रमजीवी स्त्रियों को बुरी दृष्टि से देखना। सप्ताह में तीन-चार वार जा कर सिनेमा देख आना, जिससे कुछ क्षणों के लिए शरीर में वासनाएँ हल-चल मचा दें। सुनन्दा देवी को कावेरी दीदी की तरह पढने-लिखने का शौक नहीं था। कभी-कभी वह किसी लाइब्रेरी से उपन्यास ले आती या खरीद भी लेती तो उसमें सिवाय प्रेमी-प्रेमिकाओ के कुछ तथ्य न होता। जिन उपन्यासो में नायिकायें छुई-मुई की तरह वार-वार मूर्छित हो जाती, जिनमें नायक के एक इशारे पर घोड़े भागते, नायिकाओं को सदैव दर्दे-दिल की बीमारी लगी रहती, वह अश्रुमाल पिरोती रहती और अपने प्रेमियों की कसमों को याद कर-कर के उन्हें कोसती रहतीं, फिर ठीक समय पर एक राजकुमार प्रकट होता और उनसे विवाह कर लेता।

यहां विवाह पर आकर प्राय: मेरा सोचना वन्द हो जाया करता। मुझे यह विश्वास हो चला था कि मेरा विवाह नहीं होगा। मुझसे

कौन विवाह करेगा ? मैं इतनी काली हूँ। मेरे विवाह के लिए मां को अत्यधिक प्रयत्न करना पड़ेगा जिसे वह कभी पसन्द नहीं करेंगी। शायद मुझे यहीं सुलोचना देवी की बच्चियों को देखते-देखते ही सारा जीवन बिताना पड़ेगा।

मैंने भविष्य के बारे में कभी कुछ सोचा ही नहीं था, क्योंकि मुझे अपने वर्तमान का दुःख हमेशा बहुत बड़ा लगता था, इसलिए मैं हमेशा उसी वर्तमान के दुःख को महत्व देती। कभी यह न सोचती कि जीवन में कुछ सुखमय भी होगा। मेरे जीवन की सीमायें इतनी सीमित थीं। उस समय मेरे दिमाग में यह बात कभी न आती कि सभी लोगों के जीवन की सीमायें ऐसी ही होती है।

सुबह उठकर मैं अखरोटों के वृक्ष देखती। उनमें फल लग रहे थे, छोटे-छोटे, हरे-हरे। मैं सोचती, इन अखरोट के वृक्षों का जीवन मुझ से अच्छा है, जिनके नाम पर कम-से-कम घर का नाम है—वालनट-लाज और जिनके फल को सुनन्दा देवी के भांति-भांति की क्रीम से साफ किए हुए हाथ सहलाते है। मैं अभागिन कुछ भी नहीं कर पाती। मेरा निजी काम भी चांदी करती है। तब मेरे जीवन में एका-एक तूफान आया और सब कुछ बदल गया।

११

सुबह के दस-साढ़े दस का समय होगा। सूर्य अभी धुन्ध में छिपा था। फिर भी उसकी लाली चमक रही थी, जैसे कोयले की दुकान में सन्तरों की टोकरी रखी हो। घर से तैयार होकर नौकरी की तलाश में मैं बाहर जाने को ही थी कि मैंने कमल बाबू को वालनट-लाज की

चढ़ाई चढ़ते देखा। दिल धक् से रह गया। ऐसा लगा जैसे कोई मेरे कानों में इंजिन चला रहा हो, टांगें कांप उठीं। इसकी सम्भावना ही नही थी कि कमल बाबू स्वयं यहाँ चले आयेंगे। मुझे पत्र भेजे भी चार-पाच ही दिन हुए थे। मेरे पांव आगे ही नहीं बढ़े कि थोड़ा आगे बढ़ कर मैं उन्हें अपने कमरे तक ले आती। एकाएक मुझे ख्याल आया कि ये सुन्दरी से मिलने आये होंगे। इन्होंने इस पर इतना रुपया खर्च किया था। डाक्टर इन्द्र धनुष वाला रुपया भी शायद सुन्दरी ही उड़ा गई हो। उसने प्राण बाबू को दे दिया हो। कौन उसका जिम्मेदार होगा ? सभी बातें दिमाग में एक साथ कौंध गयीं।

"जी...आइये। यह है मेरा कमरा।"

कमल बाबू ने, कमरे को नापते हुए चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। "यह सितार बाहर रक्खा है।"

"जी मैं यहां बच्चियों को सिखलाती हूँ ..सुन्दरी चली गयी है, मुझे इनकी देखभाख भी करनी पड़ती है।"

"मैं जानता हूँ सुन्दरी चली गई है। मैंने उसे बम्बई के हवाई-अड्डे पर देखा था। टण्डन साहब का छोटा भाई भी साथ था। शायद दोनों विलायत जा रहे है।"

मुझे काटो तो खून नही। ऐसा लगा था जैसे संसार की प्रत्येक वस्तु की गति बन्द हो गई है। सब कुछ सज्ञा-शून्य हो गया था, क्योकि उस समय मेरे हृदय की गति इतनी बढ़ चुकी थी। रक्त का दौरा इतना धीमा लगता था मानो बन्द ही हो गया हो। बहुत देर तक सन्नाटा रहा।

"तो आप जानते थे सुन्दरी यहाँ नहीं है ?"

"हां, तुम्हारा पत्र मुझे बाद में मिला। मैं बम्बई गया था, वहीं सुन्दरी को देखा। फिर दिल्ली आने पर तुम्हारा पत्र मिला।"

मैंने पलक उठाकर कमल बाबू की ओर पूर्ण दृष्टि से देखा।

शायद फिर कभी अवसर मिले या न मिले।

"रानी, इस बार तुम्हारा परीक्षा-परिणाम अच्छा नहीं रहा।"

"निकल गया ?"

"हां, तुम अखबार नहीं पढ़ती ?"

"इधर तीन-चार दिनों से नहीं पढ़ा। क्या फेल हो गयी ?"

कमल बाबू ने क़हक़हा लगाया। मुझे लगा था कि मेरे मन का अवसाद उस क़हक़हे में घुल गया।

'तुम इतनी सौभाग्यशाली नहीं हो कि फेल हो जाओ। पास हो गई हो, परन्तु इस साल फर्स्ट क्लास फर्स्ट नहीं, केवल पास हुई हो—बस।"

मेरे मुख से एक सुख भरी सांस निकली। चलो, बला टली। उस दिन मुझे पता चला, लोग पकवान न खाकर केवल भर पेट रोटी खाते हैं, तो उन्हें क्यों स्वाद लगती है।

"कब निकला परिणाम ?"

'तीन दिन हुए। माता जी भी लखनऊ से दिल्ली आई हैं। कावेरी भी वहीं है। दोनों को उस दिन बड़ा दुःख हुआ।"

अब हंसने की मेरी बारी थी। मैं चुप नहीं रह सकी, हँस पड़ी।

"तुम...तुम बड़ी स्वतन्त्र होती जा रही हो।"

"क्यों ?"

"अपनी बहन और मां के दुःख की तुम पर कुछ प्रतिक्रिया ही नहीं हुई ?"

"दीदी वहां पहुँच कैसे गयीं ?"

"तुम्हें घर से भेज कर धीरेन्द्र के साथ वह अकेली कैसे रहती। यों, परिस्थिति ऐसी हो गई थी कि उसे दो रात अकेले रहना पड़ा, परन्तु उसमें उसे दोष तो नहीं दिया जा सकता।"

मेरा बहुत मन था कि पूछूं दीदी ने मेरे विषय में क्या-क्या कहा

परन्तु मेरी अवस्था तो कुछ वैसी हो रही थी कि भूखे को भरी थाली मिल गई। मैं घर छोड़ कर इतनी महत्वपूर्ण हो गई थी कि कमल बाबू दिल्ली से मिलने आये थे।

"कहां ठहरे हैं आप ?"

"होटल में।"

"कब आये थे ?"

"आज सुबह।"

"यानी आपको मसूरी पहुँचे घण्टा भर हुआ है ?"

"जी, आपका हिसाब ठीक है।"

"चाय, नाश्ता ?"

"दूसरों के घर का खिलाओगी ?"

"नहीं, भोजन का मेरा अपना प्रबन्ध है। यह साथ वाली कोठरी में बिजली का चूल्हा जला कर अभी बनाये देती हूँ।"

कमल बाबू मुस्कराने लगे। "मैंने तुम्हें पढ़ते तो देखा है, खाना बनाते कभी नहीं देखा।"

मन में आया कि कह दू आपने न तो पढते देखा है, और न खाना बनाते। आपने मुझे देखा ही नहीं। यह तो केवल बात रखने के लिए कह रहे हैं। पर मैं कुछ भी नहीं कह सकी।

"चाय का पानी रख आऊं।"

"नहीं, चलो, तुम्हें होटल में चाय पिलाऊंगा।"

"थोड़ी सी यहां पी लीजिए, थके होंगे।"

"नहीं।"

"आप मां से भी नहीं ही कहा करते हैं परन्तु वह मानती कहां है। जो उनकी इच्छा होती है करती हैं।"

"तुम्हें तो जबरदस्ती बाहर ले जाऊंगा।"

"आप घर से ज्यादा महत्व होटल को क्यों देते हैं ?"

"यह घर तुम्हारा कहां है ?"

"मैं काम करती हूँ तो रहती हूं, मुफ्त तो नहीं ।"

"काम करने का वेतन भी कुछ मिलता है ?"

"नहीं ।"

"केवल रहने का स्थान ?"

"जी ।"

"बड़ी सस्ती आया है ।"

"मैं आया तो नहीं हूं ।"

"फिर क्या हो ?"

"केवल शिक्षिका ।"

"मैं तो इसे आया होना ही समझता हूं ।"

अपमान से मेरा मुख लाल हो गया ।

"मैं तुम्हें गुस्सा करने के लिए यह सब कुछ नहीं कह रहा ।"

"मैं चाय का पानी रख आऊं ?"

"तुमने अभी भी अपना विचार न बदला हो तो रख आओ ।"

मैं चाय का पानी रखने गई, तो देखा हीटर पर पानी पहले से खौल रहा था । मैं अपना नास्ता बनाने के लिए पानी रख गई थी । मैंने झटसे चाय बनायी । कुछ मिठाई और बिस्कुट रक्खे थे, उन्हें ट्रे में सजाकर कमरे में लौटी तो देखा सुनन्दा देवी विराजमान हैं । उनकी आंखें हर समय खिड़की से बाहर देखती रहतीं । सुनन्दा मेरे कमरे में पहली बार आयी थीं । शायद कमल बाबू का मुझसे मिलने आना उनके लिए बड़ा महत्व रखता था ।

बड़ी आयु तक कुंवारी रहने वाली लड़कियों की मानसिक अवस्था और सोचने की दिशा अजीब हो जाती है । उनकी मान्यतायें भी विचित्र हो जाती हैं । जीवन में केवल एक आदर्श रह जाता है, पुरुष से बात-चीत करना और अधिक से अधिक उसके निकट रहना ।

"बड़ी जल्दी चाय बना लाई हो, रानी ?" कमल बाबू ने मुस्करा कर कहा। यह शिकायत नहीं थी, प्रशंसा थी। ऐसा मैं उनके स्वर से समझ सकी।

सुनन्दा ने कमल बाबू को बड़ी ही कोमल चितवन से देखा। वह गुडिया की भांति सजी थी।

"भाभी से कह देती रानी, वह भीतर से चाय बनवा कर भेज देतीं।"

"एक ही बात है। आपका परिचय करवा दूं"

कमल बाबू ने तुरन्त उत्तर दिया—

"हम लोगों ने एक दूसरे को अपना परिचय दे दिया है।"

"सुनन्दा जी आपके लिए चाय लाऊं ?"

"नहीं, मैं अभी-अभी नाश्ता करके आई हूं।"

"रानी, मैं इन्हें बतला रहा था कि इनके भाई प्राण बाबू से मैं बम्बई में मिला था। वह सुन्दरी के साथ विलायत जा रहे हैं।"

मुझ से यह बात वह पहले ही कह चुके थे। दोबारा कहने का कारण शायद यह था कि वह सुनन्दा को नीचा दिखाना चाहते थे।

कमल बाबू की प्रकृति में यह बड़ा महत्वपूर्ण परिवर्तन था। माँ से लेकर कोई भी अन्य नारी उनके सम्पर्क में ऐसी आती नहीं देखी, जिससे वह ऐसे बोले हों। शुरू में ही अपेक्षा कर देना और बात है, बातचीत के दौरान में ऐसा बोलना दूसरी बात है। फिर सुनन्दा देवी की कृत्रिमता इस प्रकार के व्यवहार के योग्य नहीं थी। मैंने डरते-डरते उनके मुख की ओर देखा। सुनन्दा के मुख से उत्तर में एक शब्द भी नहीं निकला। बोले तो क्या ? वैसे सुनन्दा से वह सब उन्होंने कह दिया तो कोई बड़ी बात नहीं की। वह स्वयं ऐसी थीं कि इससे भी अधिक कहा जा सकता था। मुझे कमल बाबू पर हैरानी हुई। जब सुन्दरी को स्वयं लिए घूमते थे तब कोई बात नहीं थी, अब

जब दोवारा उन्होंने उसी बात को दोहराया तो मैं भी फूट पड़ी।

"जब कावेरी ने घर से निकाल दिया था तो मैं कहां जाती, बतलाइए ?"

कमल बाबू फिर हँसने लगे—"वह तुम्हारी बहन है न। मैं ऐसी बात करता तो दुनिया भर में मुझे बदनामी मिलती। हां तो रानी, उसे सन्देह किस बात पर था ?"

इसका उत्तर मैं नहीं दे पाई। एकदम लजा गई।

कुछ देर तक सन्नाटा रहा। मेरी हिम्मत हीं नहीं हुई कि मैं आंख उठा कर उनकी ओर देख सकूं।

"रानी।"

"जी"

"मुझे क्षमा कर दो।"

"इसमें आपका क्या दोष है ?"

"मेरा दोष तुम्हारे न मानने से क्या कम हो जायगा ?...मैं उसका प्रायश्चित करूंगा। तुम तैयार हो जाओ, सामान बांध लो हम लोग ढाई बजे चल देंगे।"

"पर···पर ?"

"मैं कोई विरोध नहीं चाहता।"

"मैं जाऊंगी कहां ?"

"घर।"

"नहीं, वह दोदी का घर है। अब मैं वहां वापिस न लौटूंगी।"

"···पर जब तक तुम्हारे पास कोई ढंग का काम न हो···तुम यहां भी तो नहीं रह सकती।"

वही कमल बाबू जो मेरी ओर आंख उठा कर भी नहीं देखते थे, आज मुझमें इतनी दिलचस्पी ले रहे थे। मेरा हृदय आनन्द से भर उठा। मैं जन्म से लेकर अब तक उपेक्षिता रही थी। मुझे किसी ने

स्नेह नहीं दिया था। पिता जी देते थे तो मां के व्यवहार से चिढ़ कर। अब मुझ पर स्नेहपूर्ण शासन किया जा रहा था। मेरा चिर अतृप्त हृदय इतना कोमल हो उठा कि मैं ऊपर से नीचे तक सिहर उठी। मैं दीवान पर बैठी थी। पीछे की ओर सरक कर मैंने पीठ दीवार से टेक ली।

कमल बाबू मेरी ओर देख रहे थे, देखे जा रहे थे, मेरी आंखें नीची थीं, परन्तु जैसे उनकी दृष्टि मेरा शरीर बेधती हुई हृदय तक पहुंच रही थी।

"रानी, मैंने सोच लिया है। तुम चलो, मैं तुम्हारे लिए कहीं घर ठीक कर दूंगा और नौकरी का भी प्रबन्ध कर दूंगा।"

"सच ?"

"हां, मेरी जरा सी भूल के कारण तुम्हें घर से निकाला गया।"

"उस में आप का क्या दोष ?"

"मुझे पत्र में यह नही लिखना चाहिए था कि तुम्हें कावेरी से पैसे मांगने की जरूरत नहीं।"

"मैंने तो कभी दीदी से पैसे नहीं मांगे। वह स्वयं ही दे दिया करती थीं। कभी मांगने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी।"

"अरे ! यह तो मैं भूल ही गया, अब तुम खर्च कैसे चला रही हो।"

मैं इसका कोई उत्तर न दे सकी। चांदी बेचारी ने अपने मोटे-मोटे कड़े बेच डाले थे। उससे केवल पन्द्रह रुपये मिले थे। यह इतना दुखद प्रसंग था कि मुझे इस पर बात करना बड़ा कष्टप्रद प्रतीत हुआ।

कमल बाबू ने मेरे पास सौ रुपये रखते हुए कहा : "किसी का ऋण चुकाना हो तो चुका देना। तैयार रहना, मैं ठीक ढाई बजे लेने आऊंगा।"

मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना वह बाहर चले गये।

१२

कमल बाबू के साथ दिल्ली आ जाने पर दो वर्ष तक मेरा जीवन गतिशील रहा। कोई ढंग की नौकरी नही मिली और न कोई अच्छा रहने योग्य मकान ही मिला। कमल बाबू को भी दिल्ली आ कर ही मालूम हो सका कि मुझे नौकरी दिलवाना उनके लिए कोई बहुत आसान कार्य नही है जैसा कि वह मंसूरी में समझे थे। १९५४ में दिल्ली में लड़कियों को भी नौकरी मिलनी उतनी ही मुश्किल थी जितनी शायद १९३१ में लड़कों को। शिक्षित लडकियों की संख्या इतनी हो गई थी कि मामूली-सी नौकरी के लिए बीसियों लड़कियों की अर्जियाँ आती। दूसरी लड़कियो की अर्जियों के साथ मेरी अर्जी भी प्राय: रद्दी की टोकरी में फेंक दी जाती, क्योंकि मेरे पास कोई सिफारिश नही थी।

दो-तीन महीने मैं कमल बाबू के एक मित्र के परिवार के साथ रही, परन्तु घर की एक वृद्धा को अपनी बहन का घर छोड़ कर यों दूसरों के घर में रहना पसन्द नही आया। उनका विचार था कि मैं अपनी स्वतन्त्र प्रकृति से घर की अन्य लड़कियों को बिगाड़ रही थी, जो पहले ही परिवार वालों के हाथ से निकल चुकी थी। सच तो यह है कि इन लड़कियों से कभी भी मेरी जम कर बातचीत ही नहीं हुई थी। फिर भी कुंवारी लड़की एम० ए० पास करके, नौकरानी को लेकर, जहाँ इच्छा हो वहाँ फिरती रहे, इस अवस्था में लोग यदि दोष भी दें तो उनका क्या कसूर। यह घर छोड़ने पर मैं एक होस्टल में

रही। चांदी को होस्टल में रखना मुश्किल था, इसलिए होस्टल भी मुझे छोड़ना पड़ा। यूं तो इस होस्टल में खूब आराम था। अलग कमरा तो नहीं मिला, किसी दूसरी लड़की के साथ रहना पड़ता था, परन्तु फिर भी किसी बात की चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी, राशन जुटाओ कोयला मगवाओ, बढने हुए बिलों की संख्या घटाओ। इस होस्टल में वाहर आने-जाने पर प्रतिबन्ध था, इसलिए भी मेरे लिए यह उपयुक्त नही था, क्योंकि मुझे तो संगीत सिखलाने के लिए सीखने वालों की सुविधा का ध्यान रखना पड़ता था। मुझे संगीत सिखलाने के एक-दो ट्यूशन मिल जाते। कालेज की नौकरी मिलना संभव नहीं था क्योंकि एम० ए० में मेरा क्लास अच्छा नही आया था। होस्टल मुझे छोड़ना पड़ा।

मैंने अखबार के दफ्तर में नौकरी की। वहां बड़ी भाग-दौड़ का काम था, वह मुझसे हो नहीं सका। इसलिए मुझे वह नौकरी छोड़नी पड़ी। चाहे मैंने कितनी ही उपेक्षा सही थी, फिर भी मुझे आराम का जीवन व्यतीत करने की आदत थी। सुबह आठ बजे से लेकर रात्रि के नौ बजे तक मुझसे काम नही हो सकता था। मुझे अब पता चल गया था कि दैनिक मजदूरी जो रोज मिलती है, उसका महत्त्व क्या होता है। मैं एक बिल चुकाती, तो दूसरा आ जाता, कभी-कभी मुझे लगता, मैं हार गयी हूँ, क्यों न मैं मां के पास चली जाऊँ ? आखिर उन पर मेरा भी तो कोई अधिकार है। दीदी पर उन्होने इतना खर्च किया। जब तक मुझे नौकरी नहीं मिलती, तब तक मुझे भी उनकी सहायता की आवश्यकता पड़ेगी।

एक दिन मैं मां से मिलने गयी। उस दिन मैं बहुत ही दु:खी थी मैं जिस मकान में रहती थी उसका तीन महीने का किराया मेरी ओर रुका हुआ था। मकान मालिक ने धमकी दी थी कि मैं नया मकान ढूंढ लू। उन्हें कोई ऐसा किरायेदार मिल रहा था, जो तीन महीने का

किराया पेशगी देने को तैयार था। मेरे पास कोई आभूषण भी नहीं बचा था कि उसे ही बेच डालती। मैं मन में पक्का फैसला करके गई थी कि मां से कुछ रुपया मांगूंगी।

मां ने मुझे देखा तो भृकुटि तान ली। मैंने साहस करके उनका हाल-चाल पूछा तो वह बोली, "तू बाहर से ही काली नहीं, तेरा दिल भी काला है। तुझे धन लूटने के लिए कोई और नहीं मिला, सिवाय अपने बहनोई के ?" मां ने स्पष्ट-शब्दों में कह दिया कि मैं कमल बाबू को बरबाद करना बन्द कर दूं। उनके पैसे का लोभ मेरे मन में हो तो वह दबा दूं।

मां इतनी रुखाई से मुझसे बोली थी कि मैं उसके बाद उनसे और बात नहीं कर सकी। मैंने मुन्ना से बोलना चाहा तो उन्होंने डाट दिया, "तू मौसी है या डायन ? क्यों उस बिचारे को नज़र लगाती है ?

मैं मां को दोष न देकर यथार्थ का वर्णन कर रही हूं। बीसवीं सदी में अपनी सगी मां ऐसी भी हो सकती है, शायद बहुतों को विश्वास नहीं आयेगा। भूखी मां अपने बच्चे को लेकर कुएं में कूद पड़ी हो, या जायदाद के प्रश्न लेकर मां-बेटी में लड़ाई हो गयी हो, ऐसा तो मैंने सुना था। अखबारों में भी ऐसी घटनाओं का वर्णन पढा था। बेटी का रंग काला है, तो बीसवी सदी की मध्यवर्गीय मां उसे शिक्षा देकर अपने दायित्व से मुक्त हो जायगी। छोटे से बहाने पर घर से अलग कर देगी। मां ने अपने व्यवहार से स्पष्ट कर दिया था कि मैं उनसे किसी प्रकार का सरोकार न रखूं। उनकी इच्छा भी वही थी, जो कावेरी की थी।

मेरा हृदय टूक-टूक हो गया। इक्कीस वर्ष की अवस्था में घर, परिवार होते हुए भी मैं अनाथ थी, असहाय थी।

एक बार भी मां ने यह नहीं पूछा कि तुम रहती कहां हो ?

तुम्हारा निर्वाह कैसे होता है ? तुम्हें कोई नौकरी मिली या नहीं ? शायद मां ने समझा था कि वह कुछ पूछेंगी तो अनजान में ही सारा भार उन पर आ जायगा।

कावेरी ने मां के पास बैठे देखा तो मुंह दूसरी ओर कर लिया जैसे मैंने कमल बाबू को उससे छीन लिया हो।

तब मुझे अपनी वास्तविक स्थिति का ज्ञान हुआ कि मेरा संसार में कोई भी नहीं रह गया जिसे अपना कह सकती। परिवार वाले मेरी छाया से भी दूर भागते। उस दिन के बाद मैं न मां से मिलने गई और न कावेरी से। कावेरी के दूसरा पुत्र हुआ तब भी नहीं गयी। मां ने भी नही बुलवाया। पिता जी का ख्याल आता तो मेरा हृदय स्नेह से भर उठता, परन्तु वह न तो मुझे पत्र लिखते थे और न ही दिल्ली आकर मुझसे मिलने आते थे। मां और कावेरी ने उनका मन मुझ से फेर दिया था।

मैंने किताबों में पढ़ा था; मां, पिता जी तथा दूसरों को बातें करते भी सुना था कि विलायत में अक्सर ऐसा होता है कि माता-पिता बच्चों को पढ़ा-लिखा देते हैं और फिर अलग कर देते हैं। अलग हो जाने के बाद इन बच्चो की अपनी जिम्मेदारी होती है कि वे जहा जी चाहे रहें, जहा जी चाहे नौकरी करें। यदि बीसवीं सदी आधी बीत जाने के बाद भारतीय माता-पिता ऐसा करें तो इसमे कुछ भी अनुचित नहीं था। उस उपेक्षा ने जहां मेरा हृदय चूर-चूर किया, वहां मुझे इतना आत्मबल भी दे दिया कि मैं अपने पांव पर खड़ी हो सकूं।

मैंने धीरे-धीरे यह भुला दिया कि मेरा भी माता-पिता के ऊपर कोई अधिकार है। यदि हम दूसरों से आशा करना छोड़ दें तो हमे किसी प्रकार का दुःख ही न हो। क्योंकि उससे निराश होने की आशंका ही नही होती।

बीच-बीच में मेरी बुआ के पत्र आते थे, परन्तु उनकी दया से मेरा मन खीझता ही था। मैं उस दया को ग्रहण कर अपने को और भी हीन नहीं बनाना चाहती थी। बुआ लिखती...''रानी बिटिया, सारा संसार एक तरफ, तू मेरे लिए एक तरफ। बिटिया, मेरा घर तुम्हारा घर है, तुम जब चाहो आ सकती हो। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगी। तुम्हारे आने से घर में रौनक आ जायगी। गौरी भाभी के तो पहले दिन से ही लक्षण ऐसे थे। उसने कभी तुम्हें अपनी सन्तान की तरह नहीं चाहा। गौरी अपना घर-बार छोड़ कर दिल्ली लड़की के पास जा बैठी है। भला ऐसे भी कोई करता है।" आदि-आदि।

मुझे मां के दिल्ली आने से आश्चर्य नहीं हुआ। मां की बड़ी बेटी सुन्दर है। विवाह के बाजार में उसकी अच्छी कीमत मिली है। मां यदि अपना एक मंजिला मकान लखनऊ जैसे छोटे नगर में छोड़कर दिल्ली आ गयी हैं तो उसमें किसी के हैरान होने की कोई बात ही नहीं। दिल्ली में मैंने देखा है कि जिन स्त्रियों की सुन्दर लड़कियां हैं, सुन्दर न भी हों, लड़की चुस्त और जवान होनी चाहिए, उतने से भी काम चल जाता है, उनकी माताएं अपनी बेटियों की आयु और रूप-रंग का पूरा-पूरा लाभ उठाती हैं। एक श्रीमती हकूमत सिंह हैं। उनकी बड़ी लड़की देखने में 'सफेद बिलौरी आंखों वाली बिल्ली' के समान लगती है। छोटी लड़की का रूप-रंग भी अच्छा है। बड़ी लड़की का प्रभाव मां जानती हैं। मार्च-अप्रैल के मास में उसकी कहीं न कहीं सगाई करने लगती हैं ताकि उनके परिवार का उस वर्ष का मई और जून पहाड़ पर कट जाये। विवाह का वायदा वह सितम्बर के लिए करती हैं। स्वाभाविक ही है कि भावी जमाई सोचता है कि मां बेटियों को पहाड़ पर ले जाएगा तो उसके दिन भी अच्छे कट जायेंगे। सितम्बर आते-आते बेटी को वह ऐसा कुछ सिखला देती है कि वह मंगनी टूट जाती है, विवाह रुक जाता है और श्रीमती

इन दो वर्षों ने मुझे आयु में ही दो वर्ष नहीं दिए, और भी बहुत से परिवर्तन कर दिये थे। अकेली लड़की एक नौकरानी को साथ लेकर रहे, वह चाहे काली ही क्यों न हो, पुरुष की दृष्टि से नहीं बच सकती। लोगों को मकान की तकलीफ हो सकती है, मुझे कमल बाबू की कृपा से कहीं न कहीं मकान मिल जाता था। रहने के तीन स्थान बदल कर मैं नार्थ'ऐवन्यू में कमल बाबू के एक मित्र के घर में रहने लगी थी, जो संसद के सदस्य थे। यह कमल बाबू के मित्र कैसे थे? उस वृत्तान्त में मैं न जाऊँगी। वह उनके कानूनी और गैरकानूनी कार्य-कलाप में कहां तक साथ देते थे, उनका ब्यौरा भी यहां न दूंगी। वह राज्य-सभा के सदस्य थे और उनका भविष्य छः वर्ष तक सुरक्षित था, इसलिए जब तक मैं कोई ऐसी ही अनहोनी और अवांच्छनीय बात न कर दूं, मेरे रहने का प्रबन्ध पक्का था। फिर यहां पर जो सबसे बड़ी सुविधा मुझे हुई वह यह थी कि मकान का किराया मुझे नहीं देना पड़ता था। कमल बाबू यह किराया, नकद, भैया जी के हाथ में देते थे या नहीं, इसका मुझे ठीक तरह पता नहीं और न जानने की मुझे आवश्यकता ही थी। कमल बाबू उन्हें भैया जी कहते थे। कुछ उनके पास काम करने वाले लोग भी इसी नाम से पुकारते थे। भैया जी के मकान में आकर मेरे जीवन की उथल-पुथल जरा सी कम हुई, उसमें कुछ स्थिरता आई।

१३

भैया जी के मकान में रहते मुझे लगभग चार मास हो गए थे। कमल बाबू मुझे मंसूरी से लाने के बाद दसवें पन्द्रहवें दिन मिल जाया

कमल बाबू और मुझमें अब अपनत्व बढ़ता जा रहा था। हम अनायास ही एक दूसरे को अधिक से अधिक समझते जा रहे थे। कावेरी मुझे लेकर उनसे अधिक झगड़ा करने लगी थी। कमल बाबू मदिरा तो पहले ही पीते थे, अब जरा-सा झगड़ा होता तो उसकी मात्रा और बढ़ा देते। भैया जी मना करते, मैं मना करती, परन्तु वह सुनते ही नहीं थे। मैं बहुत कहती तो हँस देते, "रानी, भगवान तुम्हें उस परिस्थिति से दूर रक्खे जिसमें से मैं गुजर रहा हूँ।" मैं चुप रह जाती। अधिक पूछने का साहस नहीं होता था, क्योंकि वह मुझ से बारह-तेरह वर्ष बड़े थे।

एक दिन कमल बाबू और दिनों से अधिक मात्रा में पीकर आए थे। घर पर कावेरी से लड़कर आये थे। आते ही बच्चों की तरह फूट-फूट कर रोने लगे। पहले तो मुझे हंसी आ गयी! मैं स्त्री होकर भी रोने के पक्ष में नहीं थी और बेकार कभी आँसू नहीं बहाती थी, चाहे मेरा हृदय कितना ही फटने को क्यों न होता हो।

मुझे उस समय यह पता नहीं चला कि उन्हे ढाढस कैसे बंधाऊं। भैया जी घर पर नहीं थे। चांदी की तबीयत अच्छी नहीं थी, वह अस्पताल दवाई लेने गई थी। तीसरे प्रहर का समय था। नॉर्थ ऐवेन्यू में सन्नाटा छाया था। कमल बाबू ऊंचे स्वर से रो रहे थे।

मैंने किसी पुरुष को इससे पहले रोते नहीं देखा था।

एक बार मैंने धीरे से कहा, "चुप हो जाइये, कोई क्या कहेगा ?"

वह फूट पड़े।

"आखिर बतलाइये भी हुआ क्या है ?"

उन्होंने उत्तर दिया। मैं दूर कुर्सी पर बैठी थी, उनके पास ही सोफे पर सरक आई। उनके मुख से शराब की तेज बू आ रही थी। एक क्षण के लिए मेरा जी मिचला उठा। मैंने संयम से काम लिया। यही व्यक्ति मुझे इतना स्नेह देता है, देख-भाल करता है...यही दुःख

में है, मुझे इससे दुराव नहीं बरतना चाहिए। वह रोते रहे। जब मुझे कुछ और नहीं सूझा, तो मैंने उनका हाथ पकड़ लिया और अपने दूसरे हाथ से उसे सहलाने लगी। जीवन में प्रथम बार उस दिन मैंने किसी पुरुष का स्पर्श किया था। मुझे लगा कि जैसे मेरा कल्प हो गया है, जैसे मैं हवा में उड़ने लगी थी। वह हाथ कोई सुन्दर हाथ नहीं था खुरदुरा, बीच की दो अंगुलियों पर निकोटिन के दाग। एक हाथ से मैंने उनका हाथ पकड़ा था, दूसरे से मैं उसे सहला रही थी। मुझे उस में अपूर्व सुख की अनुभूति हो रही थी।

धीरे-धीरे उनका रोना कम हो गया। उन्होंने मुंह ऊपर उठाया। मुंह आंसुओं से तर हो गया था। मैंने अपनी सूती साड़ी के पल्ले से उनके आंसू पोंछ डाले। अब मेरे पास अधिकतर सूती साड़ियां ही थीं क्योंकि मैं अब दीदी की उतरन नहीं पहनती थी, अपनी आय से कपड़े खरीदती थी।

"आप के लिए पानी ले आऊं?"

'नहीं, तुम यहीं बैठो।"

"आप पानी पी लेंगे तो स्वस्थ हो जायेंगे।"

"नहीं...रानी?" फिर आंसू बहने लगे।

इस बार मैंने उनकी आंखों के सामने से हाथ हटा दिये और अपने पल्ले से सारा मुख पोंछ दिया। शायद उस दिन झगड़ा विकट हुआ था मैं झूठ नहीं कहूंगी। उस दिन कमल बाबू की कावेरी के प्रति भावना जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई। वह सदैव मुझे हीन दिखाती रही थी। अब मेरी बारी थी। मैंने उन से पूछा :

"आप रोये क्यों थे?"

"बहुत दुःखी हो गया हूं।"

"क्यों?"

"वह मुझे बहुत तंग करती है। घर पहुंचते ही खाने को दौड़ती है।"

"क्यों?"

"वह सोचती है कि मेरा तुम्हारे साथ अनुचित सम्बन्ध है और मैं अपना सारा धन तुम पर खर्च करता हूं ?"

यह बात सुनकर मैं भीतर ही भीतर सिहर उठी। मेरी सिहरन उनसे छिपी नही रही।

"क्यों डर गयीं ?"

"नहीं तो। मैं सोचती हूं, इसमें आपके रोने की कोई बात न थी।"

"जब दुःख सीमा से बाहर होता है, सहन-शक्ति के परे होता है तभी रोना आता है।"

"अब मैं आपको रोने नही दूंगी।"

"क्या मेरी तक़दीर बदल डालोगी ?"

"हां, बदल डालूंगी।

'सच ?"

"हां।"

"रानी !"

वह काप गये और सिर मेरे कन्धे पर डाल दिया। मैं उनका सिर सहलाने लगी।

"रानी, तुम कितनी स्नेहमयी हो ?" मैं इसका क्या उत्तर देती, चुप रही।

"तुम दोनों बहनों में कितना अन्तर है।"

"हां, कावेरी बहुत सुन्दर है, रानी उसका नाम होना चाहिए था।"

"नहीं, रानी तुम हो, ममता की रानी, प्यार की रानी। वह केवल गोरी है—संगमरमर के पत्थर की तरह। उसके पास हृदय नही है अगर है तो उसमें धड़कन नहीं है।"

"क्यों ?"

"उसने तुम्हें घर से निकाला । फिर भी पूछती हो क्यों। मुझे भला-बुरा कहती रहती है। जरा-सी बात पर मां-बेटी दोनों मुझ पर टूट पड़ती हैं।"

"ओह ! आपने पहले कभी नही बतलाया।"

"मैं सोचता था, तुम शायद सोचो कि तुम्हारी सद्भावना और सहानुभूति उभारने के लिए यह सब तुम्हें बतलाता हूं। इसलिए जब बहुत दु:खी होता था तो शराब पीने चला जाता, तुम्हारे यहाँ न आता, चाहे इसमें संदेह नहीं कि यहां आकर मुझे शान्ति मिलती है। तुम पहले ही बहुत दु:खी हो, मैं तुम पर अपने दु:ख का भार भी लाद देता तो यह अन्याय होता। केवल मेरा स्वार्थ ..."

"आपने ऐसा सोच कर बहुत बुरा किया। मुझे आप केवल इतना ही समझ पाये हैं ?"

"नहीं रानी, तुम्हें समझा हूं, इसीलिए तो तुम पर और अधिक बोझ लादना उचित नहीं समझा । तुम मेरे दु:ख को अपने ऊपर ओढ़ लेतीं।"

"आपका मन तो हल्का हो जाता।"

"नहीं, तुम्हें और किसी तरह का सुख नहीं दे पाया, या किसी प्रकार का सुख देने के अयोग्य हूं तो अधिक तंग करने का भी मुझे अधिकार नहीं।"

"आप अधिकार न ही लें, तो मेरा क्या दोष !"

"रानी !"

"जी।"

"जानती हो, तुम बहुत बड़ी बात कह रही हो ?"

"जानती हूँ। कोई भी किसी अपने से ही तो कुछ मन की कह पाता है। दूसरों के पास इतनी फुरसत कहाँ होती है।"

मुझे पता ही नहीं लगा किस समय चाँदी कमरे में आ गई थी।

"मैं काफी के लिये पानी रखती हूँ।"

मुझे पता था कि काफी शराब का नशा कम करने में सहायक होती है।

"पानी मैं रख देती हूँ, बिटिया, तुम जरा ढंग से बैठो।"

तब मुझे भान हुआ कि जिस तरह हम लोग बैठे थे वह उचित नहीं था। कमल बाबू का नशा भी शायद कुछ कम हो गया था। उन्होंने अपना सिर उठा लिया। मैं उठकर खिड़की में से बाहर देखने लगी। मुझे चाँदी की उस छोटी-सी बात ने लज्जित कर दिया था।

चाँदी ने खाने को कुछ नमकीन ला कर छोटी मेज पर रख दिया, फिर काफी के प्याले रखते समय खाँसते हुए बोली: "जमाई बाबू, रानी बिटिया बड़ी भोली है।"

कमल बाबू हँसने लगे।

"हाँ चाँदी, उसकी आँखें बहुत ही भोली हैं।"

बात को वह टाल गये थे। परन्तु चाँदी को यह बात सुन कर बड़ी प्रसन्नता हुई। वह अपना सिर ऊपर उठा कर बोली: "मैं न कहती थी, रानी बिटिया, कि तुम्हारी आँखें सुन्दर हैं। कोई भी इन सुन्दर आँखों को देख कर इनकी तारीफ किये बिना न रहेगा। पर यह इस बुढिया की बात माने तब तो। यह तो सोचती है कि जो कुछ बुढ़िया कहती है वह सब ऐसे ही है।"

कमल बाबू हँसे जा रहे थे। अपने शारीरिक गुण-दोष उनके सामने सुन कर मुझे अटपटा लगा। मुझे कुछ और नहीं सूझा तो अपना जूड़ा खोल कर मैं चोटी बाँधने लगी।

कमल बाबू मेरी ओर ध्यान से देख रहे थे।

"रानी, मैं अब तक नही जानता था कि किसी नारी का सुन्दर होने के लिए गोरा होना आवश्यक नहीं। तुम साँवली हो कर भी इतनी

सुन्दर हो, मैं तो इस बात पर हैरान हूँ कि अभी तक तुम्हारा सौन्दर्य देखे बिना मैं कैसे रहा। शायद मैंने कभी तुम्हें इस दृष्टि से देखा ही नहीं। तुम्हारे केश कितने सुन्दर हैं !"

मेरे हाथ जैसे निश्चल, क्रियाहीन हो गए। मेरी वेणी मेरे हाथ में ही थी। जीवन में पहली बार एक पुरुष से मैं अपनी प्रशस्ति सुन रही थी। वह पुरुष भी दूसरा कोई नही, माँ का आदर्श जमाई—'कमल बाबू'। वही कमल जो ढाई वर्ष पूर्व मुझे नजर भर कर देखता भी नही था, जिसके लिए इस संसार में मेरा कोई अस्तित्व नहीं था। यदि उस समय मेरा दिमाग भी खराब हो जाता, तो मैं अपने को दोष न देती। जाने कैसा भाव मेरी आँखों में तिर आया था, मेरी भूखी आत्मा जैसे तृप्त होकर मेरे मन की दशा कह रही थी।

कमल बाबू का हृदय भी दु:खित था। उन्होंने गत दो वर्षों में कभी भी मुझसे इस तरह बात नहीं की थी और न ही मैंने कभी उनसे ऐसी बात की थी।

वह जैसे किसी सम्मोहन से खिचते-खिचते वही आ गए, जहां मैं खड़ी थी। उन्होंने मुझे हृदय से लगा लिया। मुझे केवल इतना याद है कि उनका हृदय बड़ी जोर से धड़क रहा था और मेरी साँस घुटी जा रही थी। मेरी आँखों से आँसू बह रहे थे जो कमल बाबू का कन्धा भिगो रहे थे। उनका काँपता हुआ हाथ मेरी पीठ सहला रहा था, मेरे केशों से खेल रहा था। मेरी दोनों बाहों ने उन्हें घेर रखा था। इसी दशा में हम न जाने कितनी देर खड़े रहते, यदि चाँदो बीच में ही न बोल पड़ती : "जमाई बाबू 'काफी रख दी है। जमाई बाबू, रानी जवान हो गई है, अब इसके हाथ पीले कर देने चाहिये।"

कमल बाबू छिटक कर दूर हट गए और काफी प्याले में उड़ेलने लगे।

बहुत देर तक मैं वही खड़ी रही। मुझे लगा, जैसे कहीं मैं बँध

गई हूँ। वह बन्धन उचित है या अनुचित ? उत्तर मेरे पास न था, और न उस समय उसका विचार ही आया था।

चांदी मेरे आँसू पोंछती हुई बोली : "छि: बिटिया, यह क्या नाटक हो रहा है ? कभी वह रोते है, कभी तुम रोती हो। मैंने तुम्हें तो कभी रोते देखा ही नही, यह आज क्या हुआ ?"

मैं लाज से धरती में धंसी जा रही थी।

चांदी डाँट रही थी : "चलो, मुँह धोलो चल कर।"

मैं गुसलखाने मे भाग गई थी।

उस दिन के बाद कमल बाबू तीन दिन तक नहीं आये थे। उन तीन दिनों की स्मृति मेरे मन में सदा अंकित रहेगी। उसे मैं कभी भूल नही सकूंगी। मेरी दशा ऐसी हो रही थी, मानो किसी ने मेरी जान ही खीच ली हो। तीन दिन लगातार मैं उनके बारे में सोचती रही, अन्य बातों में मन लगाने का बड़ा प्रयत्न किया परन्तु कुछ नहीं बना। रह-रह कर उनका ख्याल आता। वह मेरे प्रति कितनी चाह से भर उठे थे।

"रानी, तुम इतनी स्नेहमयी हो ! रानी ! तुम सांवली हो कर भी इतनी सुन्दर हो ! !"

फिर उनके कापते हाथ का स्पर्श। उनके हृदय की तेज धड़कन। मैं तो जैसे धरती पर स्वर्ग का अनुभव कर चुकी थी। इन्ही तीन दिनों में मुझे आकाश के तारे सुन्दर लगने लगे थे। ऐसा लगता, जैसे वे मुझे उनका सन्देश दे रहे हों। हवा की अदृश्य लहरों का स्पर्श गुदगुदा जाता, मन्त्रमुग्ध कर जाता। मैं विद्यालय में संगीत सिखलाने नही गयी। दो ट्यूशनों को पढ़ाने भी नही गई।

भैया जो घर पर नहीं थे। कभी बैठक में जा कर बैठती, कभी पलंग पर जा लेटती। जाने मुझे कैसा नशा हो गया था। उन तीन दिनो में मुझसे ढंग से खाया भी नही गया। मैं कमल बाबू का अतीत जानती

थी। मुझे पता था कि उन्होंने प्रेमा को होटल में रखा था, सुन्दरी को फ्लैट ले कर दिया था, सुलोचना देवी की ननद सुनन्दा से मिलने मंसूरी जाते थे। सबसे बड़ी बात यह थी कि वह मेरी खूबसूरत बड़ी बहन के पति थे। फिर...फिर भी जैसे मैं अपने मन पर काबू न पा सकती थी, वह बार-बार उनके चरणों में लोटता था। मैं असंख्य दु:ख सह चुकी थी, अब अपने ऊपर एक नया दु:ख ओढ़ रही थी।

मन ने कहा : "तू जरा सोच तो कि तू किस परिस्थिति में है और वह किस परिस्थिति में?"

मैं नही मानी। वह जैसे भी थे, मुझे मान्य थे, पूज्य थे।

मैंने मन से बहुत विवाद किया कि तूने कोई पुरुष देखा नहीं है... इसलिए तू ऐसा सोचती है। कोई ढग का पुरुष देखा होता, तो कमल बाबू कभी पसन्द नही आते। मैंने मन को बहुत डांटा कि उसकी याद बहुत छोटी है।

धीरेन्द्र को देखा था। निकट से देखा था।

डाक्टर इन्द्र धनुष को पहचाना था। समीरदत्त, चित्रकार को भी देखा था। कमल बाबू के मित्र राकेश, सतीश और कन्हैया को भी देखा था, जाना भी था। उनमें से कोई भी तो हृदय नही छू सका था। कमल ने उसे जैसी गति प्रदान कर दी थी। जो कुछ निस्पन्द था, उसमें स्पन्दन समा गया था। रिक्तता का स्थान पूर्णता ले रही थी। जिन आखो में केवल निराशा धू-धू कर जलती थी उन्ही मे अब भावनाओं के स्वप्न पलने लगे थे।

तब मैंने मन-ही-मन छोटी-छोटी कई घटनायें दोहरा डाली।

बी० ए० का परिणाम निकला था। इन्होंने बधाई भी नही दी थी। पास होने की खुशी आधी रह गई थी।

दीदी के साथ विवाह के बाद आये थे, तो सुन्दरी को पूछते थे। मेरा हृदय रो उठता था।

मैं दिल्ली आई थी, यह सुन्दरी पर दीवाने थे। मैं पढ़ाई भी ठीक तरह से पूरी नहीं कर सकी थी। मेरा फर्स्ट डिवीजन आता था तो इस बार थर्ड आया था। तभी मुझे विचार आया कि कमल बाबू जब कहते थे कि उन्होने बड़ा पाप किया है, तो शायद उनका मतलब...।

नहीं...मैं शायद बच्ची थी, तभी से उनकी अर्चना करती आ रही थी, जिसका आभास मुझे भी नही था। नही...मन ने तर्क किया ...यह सब पिछले दो वर्ष में ही पनपा है, जब से वह मेरे निकट आते गये है।

तीन दिन मेरी पागलो-सी दशा रही। चाँदी बेचारी पूछ-पूछ कर रह गयी कि आखिर मैं उसे बतलाती क्यों नही कि मुझे हुआ क्या था। मैं क्या बतलाती ? चाँदी क्या कहेगी ?

ओह ? भगवान क्या उन्हे चाहना पाप है ? क्या वह भी मुझे चाहते है ? न चाहते हों, तो भी क्या हर्ज है। मैं तो चाहती हूँ। मुझे अपने चाहने से मतलब है। परन्तु वह आये क्यों नहीं ?

जरा-सी भी आहट होती, तो लगता वह आ गये हैं। उनकी छाया भी न देख कर निराशा होती।

पूरे तीन दिन मैं भट्टी में तपती रही तो वह आये।

मै बैठी थी, उठने को हुई, पर उठा नही गया।

वह मुझे गौर से देख रहे थे। मैने भी छिपी नजर से उनकी ओर देखा।

वह चिन्तित लग रहे थे होंठ कुछ रूखे थे।

हृदय की धड़कन बढती जा रही थी, फिर भी जरा सा संभल कर मैने पूछा : "बहुत चिन्तित हैं आप ?" वह मुस्करा दिये।

"मैं सोचता था, तुम पिछले दिन न आने का कारण पूछोगी।"

उन्होंने जरा-सा इशारा उस घटना कि ओर कर दिया। मेरा सिर

लाज से झुक गया ।

"तुम इतनी शर्मीली क्यों हो ?"

मुझसे उत्तर नहीं बन पड़ा।

उन्होने हाथ से मेरा मुंह ऊपर उठा लिया।

"इधर देखो, रानी । क्या तुमने पिछले तीन दिन मुझे याद किया था ?"

मैंने केवल सिर हिला कर 'हाँ' मे उत्तर दिया।

वह बोले, "तुम विद्यालय भी तो नही गयी। मैंने परसों भी फोन किया था और कल भी।"

"मन नही हुआ जाने को।"

"क्यों ?"

"मै क्या जानूं।"

"क्या करती रही ?"

"बैठी रही, लेटी रही, सोचती रही।"

"बस ?"

"जी।"

"याद तो किया नही।"

मेरी हँसी निकल गयी। कितनी चतुराई से मुझ से बात निकलवाना चाहते थे !

"जानती हो मैं शराबी हूं ?"

"जी"

"बहुत बुरा हूं।"

मैं कैसे कहती कि मेरे लिये आप सारे संसार से अच्छे हैं।

"सुन्दरी शर्मा या उस जैसी और दो-तीन लड़कियों से भी मेरे सम्बन्ध रह चुके हैं।"

"जानती हूं।"

"फिर···फिर··· भी।"

मैं इसका उत्तर नहीं दे सकी। उन्होंने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैंने छुड़ाया नहीं, मुझे सुख मिल रहा था।

"रानी!"

मेरी सांस घुट रही थी। उत्तर नहीं निकला।

"रानी, सोच लो, तुम्हारी पवित्र भावनाओं के मैं बिल्कुल अयोग्य हूं। जानती हो मैंने ही तुम्हारी मां की दबी वासनाओं को भड़काया। चाहे आयु में वह मुझ से केवल पांच वर्ष बड़ी है, परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से तो वह मेरी माता के समान हैं। मैंने उन्हें पैसे वालों की दुनिया दिखलाई। अब वह आधुनिकता के रंग में इतनी रंगी जा चुकी हैं कि अपनी बेटी के साथ विदेश जा रही हैं। मैं दोनों लड़कों और उन मां बेटी की सीटें हवाई जहाज में बुक करवा कर आ रहा हूं।"

"आप भी···?"

उन्होंने बीच में टोक दिया: "मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जा सका, रानी। मैंने पिछले अड़तालीस घंटे बहुत सोचा। मैं उनके साथ नहीं जा सकूंगा।"

"क्या तुम्हें यह कम महत्व का कारण दीखता है?"

मैंने उत्तर नहीं दिया। वह स्वयं ही बोलते चले गए।

"आज तक किसी ने मुझे नहीं चाहा। सब को मेरे पैसों का मोह रहा है। रानी, मैं जानता हूं, तुम किस कठिनाई से खर्च चलाती रही हो। तुमने कभी मुझ से रुपये की बात नहीं की। मैं तुम्हारे रहन-सहन में अन्तर देखता रहा हूं। एक ऐसा भी समय था आज से छः महीने पहले तुम दोनों वक्त का भोजन नहीं जुटा पाती थीं, तब तुमने बहाना किया कि चांदी बूढ़ी हो गयी है, अब मैं उसे और कष्ट नहीं देना चाहती। वह एक बार भोजन बना ले, हम लोग दोनों समय खा लेंगी। तब मैंने उस महीने राशन भिजवाया तो तुमने दूसरे महीने ही राशन

वाले को मना कर दिया कि पिछले महीने का राशन अभी रक्खा है। याद है तुम्हें जब तुम सर्दियों में बीमार हुई थीं, दवाई खैराती अस्पताल से आती थी? तुम्हारी बीमारी के सातवें रोज मुझे चांदी मिल गई दवाई लाती हुई, तो मैंने उसे मोटर में बिठा लिया और एक डाक्टर ले आया। उसने तुम्हें देख कर बतलाया था कि यदि समय पर इलाज न होता तो शायद इनको 'निमोनिया' हो जाता। उस दिन में तुम्हारे आत्म-बल को समझ गया था कि तुम अपनी मां और बहन की तरह रुपये के जोर पर जीती नहीं जा सकतीं।"

बात करते समय वह मेरी ओर देख रहे थे। इसलिए मैं कांप-कांप उठती।

"वे कब जा रही हैं?"

"एक महीने बाद।"

"क्या मां [illegible] जा रही हैं"

"नहीं।"

"क्यों?"

"वह सोचती है पिता [illegible] आयेंगे।"

"पिताजी जी को लिख दिया है?"

"नहीं, जब तक सीटें बुक न हो जातीं, तब तक लिखने में कोई तुक न थी।"

"मां इस अवस्था में विदेश जाकर क्या करेंगी?'

"अपने दामाद के पैसे को पर लगवायेंगी।"

"तीन आदमियों के जाने से खर्चा तो बहुत होगा?"

"हां, तुम क्यों चिन्ता करती हो, जैसे-तैसे पूरा हो जायेगा। मेरी भी इच्छा है कि ये जायें। मुझे भी थोड़ी राहत मिले।"

कुछ देर दोनों मौन रहे। फिर वह स्वयं ही बोले: "रानी, तुम इन तीन दिनों में जैसे कुछ बदल गयी हो।"

"नहीं तो।"

"तुम्हारी उन्मुक्त बातचीत जाती रही···खो गई।"

मैं क्या कहती कि आप के प्रेम ने मुझे नया जीवन दिया है। मेरी दुनिया बदल डाली है।

"तुम माँ से मिलने न जाओगी ?"

"क्या वह मुझसे मिलना चाहती है ?"

"नहीं।"

"मेरे ख्याल में उन्हें मेरी सूरत से भी नफरत है। चाँदी कहती है उन्होंने तो मुझे दूध भी नहीं पिलाया, क्योंकि मैं काली थी। मुझे जन्म देकर उन्होंने चाँदी के हवाले कर दिया था।"

"बहुत अच्छा हुआ, नहीं तो तुम में भी वैसे संस्कार पनपते।"

मेरे मुख पर घोर आश्चर्य था।

"मेरी ओर चकित-सी क्यों देख रही हो ? सच ही कहता हूँ, तुम भी वैसी ही हो जातीं—पैसे के लिए जान देने वाली।"

"इसमें आप उनको ही कैसे दोष दे सकते है, लगभग सब ही ऐसे होते हैं।"

"तुम उन लोगों द्वारा दुतकारी गयी हो, फिर भी उन्हीं का गुणगान कर रही हो, यह कैसी बात है ?"

मन में आया, कह दूँ कि आपने भी तो इतने वर्ष मेरी ओर आँख उठा कर नहीं देखा। आपकी दी हुई उपेक्षा भी तो मैंने ही सही थी। आज नया क्या है ?

उस दिन कमल बाबू बड़ी रात तक मेरे यहाँ ही रहे। उन्होंने भोजन भी वहीं किया। भोजन मैंने बनाया। मैं जब तक भोजन पकाती रही, वह मेरे पास ही बैठे रहे।

१४

कावेरी ने विदेश के बहुत से बैंकों मे अपने नाम रुपया जमा करवा लिया था। जब काफी रुपया वह ले चुकी तो उसे कमल बाबू के अस्तित्व से भी चिढ़ हो गई। वह घर जाने में भी घबराने लगे। पहले तो केवल मुख से फटकारती थी, अब वह हाथ चलाने लगी थी। माया के उल्लास में कावेरी और माँ प्राय: बाहर घूमती रहती और साथ ले जाने के लिये वस्तुएं खरीदती रहतीं। कमल बाबू में उनकी दिलचस्पी घट रही थी।

पिताजी लखनऊ से दिल्ली नहीं आये थे। उन्होंने पत्र में लिखा था कि माँ को जमाई के रुपये पर विदेश नही जाना चाहिये। पत्र पढ़ कर माँ का मन एक क्षण के लिये भी डांवाडोल नहीं हुआ। उन्होंने मुस्करा कर पत्र कमल बाबू को दिया था कि वह देख लें कि उनके ससुर का दिमाग खराब हो गया था। वह अपने चौथे चरण में बढ़े जा रहे थे। नही तो ऐसी बात लिखने में कोई तुक नहीं थी। जब सब सामान बँधा था, सब तैयारी हो चुकी थी, तब ऐसी बात लिखने में भला क्या तुक? भला जमाई कोई पराया है? जिसे अपने हृदय का टुकड़ा, अपनी लड़की दे दी, वह कभी पराया हो सकता है? कमल बाबू ने मुझे बतलाया था, इसके बाद उन्होने बहुत-से ऐसे उदाहरण दिये थे जिनमें जमाई ने या तो ससुर को मकान बनाकर दिया था, या उनके छोटे बच्चों का लालन-पालन किया था। अपने इस विचित्र काम के लिये उन्होंने सभी युक्तियाँ प्रस्तुत की थीं।

कावेरी यह सुन कर पुलकित हो उठी कि कमल बाबू सचमुच ही उन लोगों के साथ नहीं जा रहे। जब उन्होंने हवाई जहाज के टिकट

उनके हाथ पर रख दिये तो कावेरी को विश्वास आया। माँ ने कावेरी को उकसाया कि कमल बाबू जो हमारे साथ नही जा रहे, यह उचित नही हो रहा। माँ के कहने पर कावेरी ने कमल बाबू से छोटा-सा युद्ध कर डाला। जब वह भी बोले तो उसने छोटे लड़के के दूध की बोतल उनके माथे पर दे मारी। बोतल टकरा कर नीचे गिरी और टूट गयी। कावेरी को निराशा के साथ ग्लानि हुई कि यह सब क्या हुआ, वह तो समझ रही थी कि उन्हे चोट आ जायेगी। उसके मन पर एक अजीब-सा असर हुआ। कमल बाबू ने बतलाया कि वह चोट खाई हुई नागिन की तरह फुंफकार उठी थी, परन्तु वह जान बचा कर भाग आये थे।

उसके बाद बहुत विचित्र घटनायें हुईं। कावेरी से मेरा कभी विशेष प्यार नही रहा था, उसने हमेशा मुझे अपने पाँव की जूती ही समझा, परन्तु जब-जब मैं सुनती कि उसने आज यह किया है, कल वह किया, तो मेरा हृदय दुःख के साथ-साथ लज्जा से भी भर उठता। मुझे लगता कि मैं कावेरी की यह सब बातें सुनने से पहले मर क्यों नही गयी। मैंने सुना था कि मेरी नानी बहुत चटोरी थी, कोई भी उन्हें खाने के लिये बुलाता, या कहीं भी वह जातीं, तो खाने के लिये बैठ जाती। माँ जब भी नानी का जिक्र करतीं तो उनके चटोरेपन की चर्चा हो जाया करती थी। नानी मां भी गोरी थी, इसलिये उनका यह अपराध क्षम्य था। माँ को केवल एक बात की चिन्ता थी कि नानी की यह आदत कहीं मुझ में या दीदी में अपना रंग न दिखाने लगे। हम दोनों को खाने का तो ऐसा चाव था। कावेरी के रुपये का चाव नानी के चटोरेपन से कम न था। एक दिन कमल बाबू मेरे यहाँ आये थे कि कावेरी ने एक कपड़े वाले से जा कर कुछ उधार माँगा, क्योंकि उसे पता था कि उनका हिस्सा उस दुकान में था। उसी शाम वह मुझे उस दुकान पर बड़े आग्रह से ले आये कि मैं जा कर एक साड़ी उनकी पसन्द की ले लूँ। उस दिन मेरा जन्म दिन था। कावेरी ने विवाह के

पहले दो तीन वर्षों में मुझे उपहार भेजे थे। कमल बाबू को तारीख याद थी।

मैं उस घटना के बाद पहली बार उनके साथ बाहर आई थी। मेरे मन की उस समय की प्रसन्नता शब्दों में व्यक्त नहीं हो सकती। मुझे लगा था, जैसे युग-युग से मैं इस अवसर की प्रतीक्षा में थी। मोटर में उनके साथ बैठी थी तो मैं अपने विचारों में इतनी विभोर थी कि दायें-बायें क्या हो रहा है, मुझे उससे कोई मतलब नहीं था।

मेरे हृदय मे जैसे रेशम की गाठें बँध रही थीं, खुल रही थीं। जैसे मैं मखमल के उड़नखटोले पर बैठी थी, जो देवताओं की नगरी में उड़ रहा था। मैं धरती पर उस समय आई जब कमल बाबू ने मेरे लिये हल्के आसमानी रंग की बढ़िया बनारसी सिल्क की साड़ी पसन्द की। दाम चुकाने के लिए हम लोग काउंटर पर गये तो दूकान के मालिक ने कमल बाबू के साथ एकान्त में बात करनी चाही। वह दूकानदार मुझे कावेरी के साथ कई बार देख चुका था, फिर भी उसके मुख पर कुछ ऐसा भाव था, मानो मेरा कमल के साथ जाना कुछ राज रखता हो। उसके मुख का कुत्सित भाव मुझे लगा जैसे मेरी निर्मल भावनाओं के चाँद को ग्रसने लगा था।

एकान्त में उसने कमल बाबू को बतलाया कि कावेरी उनकी दूकान से चार हजार रुपया उधार माँग रही थी, उनके पास केवल तीन हजार था, वह उन्होंने उसे दे दिया था और रजिस्टर में दो-तीन जगह उसके दस्तखत करवा लिये थे।

कमल बाबू का मुँह जरा-सा रह गया। कावेरी नीचता कर सकती है, पर इतनी भी कर सकती है, इसका उन्हें विश्वास नहीं था। उन्होंने उसी समय चैकबुक निकाली और तीन हजार रुपये का चैक काट दिया। रजिस्टर में नाम कटवा कर मोहर लगवा दी कि रुपया चुका दिया। जिस भावना से वह मुझे दूकान पर ले गये थे

उसमें कमी नहीं हुई। वह कावेरी के इस नीच व्यवहार से दुखित थे। उस शाम उन्होंने मदिरा नहीं पी, बल्कि भावावेश में उन्होंने मेरा हाथ पकड़ कर कसम खाई, "रानो आज तुम्हारा जन्म दिन है, मैं वायदा करता हूँ कि अब शराब नही पीऊँगा।"

"इतनी बड़ी बात यों ही न कह डालिये।"

"मैं तुम्हारे साथ होता हूँ तो पीने की इच्छा नहीं रहती।"

"सच ?"

"सच।"

"इसे मैं अपना सौभाग्य समझती हूँ।"

"रानो, मेरा ख्याल है, बहुत-से मुझ जैसे लोग शराब पीना छोड़ दें, यदि उनके मन का कोई गहरा अभाव भर जाये। मुझे ही ले लो, मैं शुरू से ही अभाव में रहा हूँ। माँ को अपना सोना और रुपया प्यारा था, मैं छोटा था। जब मेरे पालन-पोषण का समय आया, पिताजी, बहुत धनी हो चुके थे। लक्ष्मी की उन पर असीम कृपा थी। मै माँ को रुपया बटोरते, सोना निकालते, रखते और खरीदते देखता था। मुझे पैसे से, सोने से चिढ़ हो गयी थी। मैं खुले हाथों लुटाता रहा, पर उसने मेरे मन के अभाव को कभी नही भरा। मन मे हमेशा ऐसा लगता, जैसे मै जो-कुछ पाना चाहता हूँ, वह तो मिलता नही। मैंने सुन्दर लड़की देख कर विवाह किया, उस पर बहुत रुपया लगाया, उसे खुश करना चाहा पर मन नही भरा। मन बहलाव के लिये कुछ दोस्त पाले। चौंको मत, अमीर लोग दोस्त पालते है कि वे पालतू कुत्तों की तरह उनके इशारों पर दुम हिलाते रहें और समय-समय पर खुशामद करते रहे। उस सबने भी शान्ति नही दी। शराब पहले कभी-कभी शौकिया पीता था, फिर अपने को भुलाने के लिए पीता रहा। मैं जानता हूँ अपने से भागने के लिए शराब केवल कायर पीते है। वे जीवन के दुखों का, वास्तविकता का सामना नही कर पाते, इसलिए शराब

पीते हैं। मैं भी इसीलिए पीता था। अब जब भी तुम्हारे साथ होता हूँ, तो मदिरा का विचार भी नहीं आता।"

मैंने उनकी ओर देखा। उनका मुख पहली बार मुझे सुन्दर लगा। प्रिय व्यक्ति का साधारण-सा मुख भी इतना सुन्दर क्यों लगता है ? यह मुझे उस शाम पता चला, जब संध्या की मधुमयी वेला में उन्होंने अपनी सबसे बड़ी कमजोरी से छुटकारा पाने की कामना की। मेरा हृदय पिघल गया। मैं भी शराब को बुरा समझती हूँ, परन्तु यह उन्हें प्रिय थी, मेरे लिए वे प्रतिज्ञा कर रहे हैं, मुझे यह बात बुरी तरह छू गयी। मैंने अनुनय के स्वर में कहा : "आप प्रतिज्ञा मत कीजिये, केवल इतना कहिये कि भविष्य में आप पीने का प्रयत्न न करेंगे।"

"नहीं रानी, प्रतिज्ञा करके मैं तुम पर अहसान नहीं कर रहा हूँ। अपने मन की कुँठा को बाहर फेंक रहा हूँ। तुमने मेरे मर्म को जैसे छू लिया है। मुझे कब सहानुभूति और प्यार की आवश्यकता होती है तुम जानती हो। आखिर पुरुष नारी से क्या चाहता है ? केवल वह कोमल भावना, जो शरीर से परे है, जो बाह्य रूप की परिधि में नहीं बाँधी जा सकती। पुरुष का हृदय अपने जोड़ का दूसरा हृदय खोजता है। यदि वह मिल जाये तो वह जी जाता है, नहीं तो हमारे समाज में अस्सी प्रतिशत विवाह मर्यादा के नाम पर या और किसी सुनहरी नाम पर निभाये तो जाते ही हैं।"

मेरा हृदय जैसे मेरा रहा ही न हो। मुझे लगा, जो कुछ मेरे भीतर है वह तो कमल बाबू का अंश है, जो मेरा था वह कहाँ गया। क्या इसी अवस्था को 'प्रेम' की संज्ञा दी जाती है ?

वह शराब न पीने का वायदा कर चले गये थे। परन्तु दूसरे दिन वह नही आए, तीसरे दिन भी वह नहीं आए, तो मैं समझी कि कावेरी और माँ के विदेश जाने को ले कर व्यस्त होंगे। मेरा मन तरह-तरह की आशंकाओं से भर उठा। मैंने चांदी को उनके घर जा कर देख

आने के लिये कहा तो वह मुझ पर बुरी तरह बरसी। मेरे बार-बार कहने पर वह बोली : "बिटिया तू पागल हो गयी है। वह अमीर है, पुरुष है, तुम से थोड़ा मन-बहलाव कर लेते हैं, तो तेरा सिर ही फिर गया है। मैं तो जाऊँगी नहीं, तू ही जा, खुद खबर ले आ। माँ और बहन से भी मिल आना। मैं वहाँ जाऊँ तो दोनों की दोनों मुझे मारने को दौड़ती हैं। कौन उनकी मार खाये।"

वे चार दिन किसी तरह डूबते-तैरते बीते। पाँचवें दिन अस्पताल से एक डाक्टर मुझे सूचना देने आया कि कमल बाबू ने बुलाया है और वह बहुत बुरी तरह से घायल हुए थे। चौबीस घंटे उनको होश नहीं आया, फिर उन्हें आराम देने के लिये कुछ दवाइयाँ ऐसी दी गयी थीं कि वह सोये रहें। अब वह इस स्थिति मे थे कि कुछ मिनट बातचीत कर सकें।

मेरे यह पूछने पर कि वह घायल कैसे हुए—डाक्टर ने हँस दिया और कहा कि वह शायद आपको स्वयं ही बतलाना चाहेंगे कि वह घायल कैसे हुए थे।

मेरी जो अवस्था यह समाचार सुनने के बाद हुई, उसकी मुझे पूरी याद नहीं। मुझे ऐसा लगा था जैसे जीते जी मर गई हूँ। आज मुझे वह भी याद नहीं कि मै अस्पताल तक कैसे पहुँची थी। केवल इतना याद है कि जब मैं वहाँ पहुँची थी तो पता चला, मैंने जूता नहीं पहना था, मैं नंगे पाँव ही चली गई थी।

मेरी आँखों से अविरल जल-धारा बह रही थी। वह उस समय होश में थे, उन्होंने मुझे ढाढ़स दिया। बड़े ही धीमे तथा शान्त स्वर में बोले थे, "रानी, मैं मरूंगा नहीं। तुम रो क्यों रही हो ? कावेरी मुक्त होना चाहती थी, वह मेरी ओर से मुक्त है। मैंने वकील को बुलवा कर उसके जाने से पहले अपना बयान दे दिया है। हवाई-जहाज में उडने से पहले वह यहाँ आई थी। जिन नौकरों के सामने उसने मुझ

पर फूलदान मारा था, वे भी आये थे। उसे अब मेरी आवश्यकता नहीं है। मां-बेटी के पास इतना पैसा तो है कि वह साल-दो साल तक ख. सकती हैं।"

रोते-रोते मेरी हिचकी बध गई थी। वह सांत्वना देने लगे। वह रात और दो दिन, दो रात मैं वैसे ही पलंग के पास बैठी रही। कावेरी ने फूलदान क्यों मारा था, यह जिज्ञासा मेरे मन में बनी रही। मैंने उनकी अवस्था देख कर पिताजी को तार दे दिया था। वह तार पाते ही दिल्ली आ गये थे। मुझ से वह चार वर्ष बाद मिले थे। इस अवधि में बहुत-कुछ घटा था। पिताजी मुझे हृदय मे लगा कर बहुत रोये थे। उन्हें मां के विदेश जाने और कावेरी को साथ ले जाने का दुःख भी न था।

कमल बाबू के ज़रा स्वस्थ होते ही पिताजी ने आग्रह किया कि वह बतलायें कि कावेरी ने फूलदान क्यों मारा था। तब उन्होंने बतलाया कि जब कपड़े वाले ने उन्हें कावेरी की कर्जा लेने की बात बतलाई थी, तो दूसरे दिन वह बैंक में आभूषण देखने गये। सब आभूषण भी नदारद थे। उन्हें तभी लगा था कि कावेरी के मन में कुछ रहस्य था। उसकी आवश्यकताओं के लिये तो कमल बाबू ने सब प्रबन्ध कर दिया था, फिर चोरी-चोरी यह रुपया वह क्यों जमा कर रही थी? घर पहुंचते ही उन्हें अपनी डाक के साथ धीरेन्द्र का पोस्ट-कार्ड मिला जो उसने जहाज पर से लिखा था। कावेरी ने ही धीरेन्द्र को रुपया दिया होगा, नहीं तो वह पैसे-पैसे का मोहताज विदेश कैसे जाता? कार्ड में धीरेन्द्र की कुशलक्षेम के समाचार के साथ ही कावेरी को याद दिलाया गया था कि वह अपना वायदा न भूले, सीधी स्विट्जरलैंड ही आये और वहां से वे मिल कर कहीं और जाने का कार्यक्रम बनायेंगे।

कमल बाबू ने बतलाया कि उन्हें क्रोध तो बहुत आया था, परन्तु

वह उसे भीतर ही भीतर पी गये थे। कावेरी से उन्होंने केवल इतना ही कहा था कि धीरेन्द्र धूर्त है और कावेरी को उसके जाल में नहीं फंसना चाहिये। यह सुन कर कावेरी ने कमल को बहुत बुरा-भला कहा। कमल बाबू ने अन्त में उससे इतना कहा था, "कावेरी, तुम्हारे मन में अपने भावी जीवन के लिए कोई योजना हो तो बतला कर जाना।"

कावेरी एक मेज के पास खड़ी थी। उस पर एक बड़ा-सा फूलदान रखा था वही उसने कमल के सिर पर दे मारा। घर का पुराना नौकर पास ही परदे की ओट में सब सुन रहा था, उसने कमल बाबू को हाथों में थाम लिया, नहीं तो वह शायद और अधिक घायल होते।

पिता जी कावेरी के कृत्य पर लज्जित थे। पर क्या करते? लखनऊ जाने से पहले वह नार्थ ऐवेन्यू आये और लखनऊ वाले मकान की वसीयत मेरे हाथ में थमा कर बोले: "रानी, तुम्हारी मां की फिजूलखर्ची ने और तो कोई पूंजी मेरे पास नहीं रहने दी। मेरी पेन्शन में तीन महीने और रह गये हैं, मैं अब उस मकान में नहीं रहूंगा। हरिद्वार अपने स्वामी जी के आश्रम में चला जाऊंगा। बेटी, अपने बूढ़े पिता को क्षमा करना कि वह तुम्हारे लिये और कुछ करने में अपने को असमर्थ पा रहा है।"

पिता जी भी रोये, मैं भी रोई। उनके चले जाने पर मुझे फिर वैसी ही यातना हुई, जैसी लखनऊ से दिल्ली आते समय हुई थी। परन्तु कमल बाबू जब-जब मुझे मिलते, नया आश्वासन देते, नयी आशा बंधाते। वह कहते, "रानी, मैंने तुम्हारे साथ एक सुनहरे भविष्य का स्वप्न देखा है। मुझे पूर्णतः स्वस्थ हो जाने दो। मैं उस क्षण-क्षण का ऋण चुकाऊंगा जिसमें तुमने उपेक्षा और वेदना सही है।

मैं "मैं सोचती कि मेरा भाग्य इतना बलवान कहां।

अब हम लोग लखनऊ के अपने उसी छोटे-से मकान में रहते हैं।

कमल किसी काम से दिल्ली गये हैं। मुझे यह घर उस उपेक्षा और वेदना की याद दिलाता है, जिसे मैंने बचपन में सहा है। मैं अकेली हूं, कहीं मुझे कावेरी के क़हक़हे सुनाई देते हैं, कहीं माँ का कहना, "यह तो काली है।" चाँदी बहुत बूढ़ी हो गई है। वह केवल चारपाई पर बैठ कर राम-राम जपती है। उससे बातचीत करके मन नहीं बहलाया जा सकता।

मुझे लगता है, जैसे मैं पागल हो जाऊँगी। जैसे यह सब दीवारें मिल कर मेरा उपहास कर रही हैं। कमल एक सप्ताह के लिए गये थे। पिछले एक वर्ष से हम दोनों एक दिन के लिये भी एक-दूसरे से अलग नहीं हुए। वह प्रथम बार बहुत ही जरूरी काम से गये हैं।

अकेलेपन के सन्नाटे से छुटकारा पाने के लिए मैं कोई उपाय ढूंढ़ रही थी कि मुझे पिता जी का पत्र मिला। मां ने उन्हें लिखा था कि उनसे छुटकारा चाहती है, क्योंकि उन्हें वहां कोई धनाड्य विधुर मिल गया था, जो उनसे विवाह करना चाहता था। पिता जी ने लिखा था कि उन्होने मां को मुक्त कर दिया है।

कावेरी तो इस इरादे से विदेश गयी ही थी, मां भी।

पिता जी के पत्र ने मुझे भीतर ही भीतर झकझोर दिया। पुरानी स्मृतियां फिर जाग उठी। इस आत्म-मन्थन में मैं यह कहानी लिखने पर बाध्य हो गई। सात दिन बीत गये है, बस कल सवेरे कमल यहां पहुँच जायेंगे। आज तार आ गया है। मैं प्रभात की प्रतीक्षा में हूं।